मजदूरी और प्रेम (निबन्ध)

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

प्रश्न 1. लेखक पूर्ण सिंह ने किन-किन व्यक्तियों को साधु कहा है?

(अ) शिक्षक व विद्यार्थी
(ब) किसान व भेड़पालक
(स) मजदूर व व्यापारी
(द) छात्रवे नेता

उत्तर: (ब)

प्रश्न 2. "उसे पीड़ा हुई तो इन सबकी आँखें शून्य आकाश की ओर देखने लगीं।" यहाँ लेखक ने उसे' सर्वनाम का प्रयोग किसके लिए किया है –

(अ) किसान
(ब) गड़रिया
(स) बीमार भेड़
(द) गरीब महिला

उत्तर: (स)

अति लघूत्तरात्मक प्रश्न

प्रश्न 1." ऐसा काम प्रार्थना, सन्ध्या और नमाज से क्या कम है।" लेखक ने किस काम की ओर संकेत किया है?

उत्तर: लेखक के लिए विधवा स्त्री ने रातभर जागकर, भूखे रहकर कमीज सिलने का प्रेमपूर्ण पवित्र श्रम किया है। लेखक का संकेत इसी ओर है।

प्रश्न 2. लेखक जब अनार के फूल और फल देखता है तो उसे किसकी याद आती है?

उत्तर: लेखक जब अनार के फूल और फल देखता है तो उसे माली के रुधिर की याद आती है।

प्रश्न 3. लेखक ने किसान को किसके समान बताया है?

उत्तर: लेखक ने किसान को ब्रह्मा के समान बताया है।

लघूत्तरात्मक प्रश्न

प्रश्न 1. लेखक की दृष्टि में मजदूरी का भुगतान किस रूप में किया जाना चाहिए?

उत्तर: किसी मजदूर के दिनभर के काम की मजदूरी कुछ सिक्कों में नहीं दी जानी चाहिए। मजदूर के शरीर के अंग, जिनसे उसने श्रम किया है, ईश्वर ने बनाए हैं। धातु, जिनसे सिक्के बने हैं, वह भी ईश्वर द्वारा निर्मित हैं। मजदूरी का भुगतान परस्पर प्रेमभरी सेवा के द्वारा ही किया जाना चाहिए।

प्रश्न 2. लेखक ने किसे बेघर, बेनाम और बेपता कहा है और क्यों?

उत्तर: लेखक ने गड़रिये को बेघर, बेनाम और बेपता कहा है। गड़रिया भेड़ों को चराने के लिए स्थान-स्थान पर घूमता फिरता है। जहाँ जाता है, वहाँ पर ही घास की झोंपड़ी बना लेता है। उसका कोई स्थायी घर नहीं है। वह कोई मशहूर व्यक्ति नहीं है लोग उसका पता नहीं जानते।

प्रश्न 3. लेखक को जिल्दसाज कब याद आता है और क्यों?

उत्तर: जब लेखक पुस्तक को उठाता है तो उसको जिल्दसाज याद आ जाता है। पुस्तक उठाते ही उसको लगता है कि उसका हाथ जिल्दसाज के हाथ के ऊपर पड़ गया है। लेखक को पुस्तक उठाते ही भरतमिलाप का सा आनन्द आ जाता है। जिल्दसाज उसका आमरण मित्र बन गया है।

निबन्धात्मक प्रश्न

प्रश्न 1. श्रम के महत्व पर एक संक्षिप्त निबंध लिखिए।

उत्तर: मनुष्य के जीवन में श्रम का बहुत महत्व है। जो श्रम से बचना चाहता है और आराम के साथ पड़ा रहना चाहता है, उसको जीवन में अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। संसार में केवल विचार करने से किसी काम में सफलता नहीं मिलती ।

कहा गया है- "उद्यमेन हि सिध्यन्ति कार्याणि न मनोरथै" अर्थात् काम प्रयत्न करने से ही पूरे होते हैं। केवल सोचने से नहीं।

श्रम करने से मनुष्य का स्वास्थ्य ठीक रहता है। श्रम शरीर को मजबूत तथा पुष्ट करता है। स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मस्तिष्क रहता है। स्वस्थ मस्तिष्क में ही अच्छे विचार उत्पन्न होते हैं। श्रम किए बिना चिन्तन करना निरर्थक है। वह चिन्तन निकम्मा और अनर्थकारी होता है।

मठों-मंदिरों में दान के धन पर पलने वाले आरामतलबी लोग ठीक से विचार नहीं कर सकते। साधु-संत भी श्रम करेंगे तभी धर्म का सच्चा स्वरूप जान सकेंगे तथा लोगों को ठीक तरह से मार्गदर्शन कर सकेंगे।

सभी महापुरुषों ने श्रम को अपने जीवन का अंग बनाया है। टाल्सटाय एक महान लेखक थे किन्तु वह जूते गाँठते थे। फारसी के श्रेष्ठ कवि उमर खैयाम तंबू सीते थे।

खलीफा उमर अपने रंग महल में चटाई बुनते थे। सन्त कबीर कपड़ा बुनते थे तथा रैदास जूते बनाया करते थे। भगवान श्रीकृष्ण वन में जाकर गायें चराते थे। गुरुनानक भी पशु चराते थे। विश्व में सभ्यता के विकास में श्रम का बड़ा हिस्सा है।

श्रमिकों ने ही भव्य भवनों, सड़कों, पुलों, कल-कारखानों इत्यादि का निर्माण किया है। श्रम के बिना कोई भी काम नहीं हो सकता। किसान के श्रम से ही खेतों में अन्न पैदा होता है। माली का श्रम बाग में फल-फूल उत्पन्न करता है।

मजदूर का श्रम शानदार मोटरों, वायुयानों, जलयानों, रेलगाड़ियों आदि का निर्माण करता है। श्रम ही शक्तिशाली अस्त्र-शस्त्र बनाकर सैनिकों को देता है और स्वदेश की रक्षा करता है। श्रम के अभाव में विश्व आगे नहीं बढ़ सकता।।

प्रश्न 2. किसान का जीवन त्याग और मेहनत का जीवन है। इस कथन पर अपने विचार लिखिए।

उत्तर: किसान को अन्नदाता कहते हैं। वह अपने खेतों में कठोर परिश्रम करता है। वह खेत को जोतता-बोता है। उसकी सिंचाई करता है। फसल की रखवाली करता है।

फसल के पकने पर उसकी कटाई और बालियों के अन्न के दाने निकालती है। बैल तथा अन्य पशु खेती के कार्य में उसके सहायक हैं। उनके पालन-पोषण तथा देखभाल का उत्तरदायित्व भी किसान ही उठाता है। सबेरा होते ही वह हल-बैल लेकर खेत की ओर चल देता है।

धीरे-धीरे सूरज ऊपर चढ़ने लगता है परन्तु किसान का काम बंद नहीं होता। दोपहर को खेत में ही किसी वृक्ष के तले कुछ देर आराम करने के बाद वह शाम तक अपने काम में लगा रहता है। अँधेरा होने पर वह घर लौटता है तथा कुछ छोटे-मोटे काम निबटाता है।

किसान सर्दी, गर्मी तथा बरसात की परवाह किए बिना अपने काम में लगा रहता है। पूस की सर्द रात हो या जेठ की जलती हुई दोपहर किसान अपने काम को पीठ नहीं दिखाता।

तेज बरसात भी उसका काम रोक नहीं पाती। वह निरन्तर काम करने में तल्लीन रहता है। किसान त्यागपूर्ण जीवन जीता है। वह दूसरों के हितों की रक्षा के लिए अपना सुख-दु:ख त्याग देता है। वह स्वयं भूखा रहकर दूसरों का पेट भरता है।

वह अपने पशुओं की देखभाल करने में अपने रात-दिन के आराम की भी चिन्ता नहीं करता । उसका बैल बीमार हो जाता है।

तो वह नींद त्यागकर उसकी सेवा तथा देखरेख में लगा रहता है। वह स्वयं दु:ख सहकर भी दूसरों को सुख देना चाहता है। वह किसी का अहित नहीं चाहता। उसकी जरूरतें कम होती हैं।
संग्रह की प्रवृत्ति से वह दूर रहता है। परहित के लिए अपना सर्वस्व त्याग देने में उसको थोड़ा-सा भी संकोच नहीं होता। इस प्रकार हम देखते हैं कि किसान का जीवन त्याग और परिश्रम का जीवन है।

अन्य महत्वपूर्ण प्रश्नोत्तर

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. किसान के ईश्वर प्रेम का केन्द्र है –

(क) मंदिर
(ख) साधु-सन्त
(ख) कीर्तन
(घ) खेती

2. सरदार पूर्ण सिंह द्वारा लिखित निबंध नहीं है –

(क) मजदूरी और प्रेम
(ख) आचरण की सभ्यता
(ग) कवि और कविता
(घ) सच्ची वीरता

3. पुस्तक देखते ही सरदार पूर्ण सिंह को याद आ जाता है –

(क) लेखक
(ख) जिल्दसाज
(ग) प्रकाशक
(घ) मुद्रक।

4. गड़रिये के जीवन से संबंधित सफेद वस्तु नहीं है –

(क) रुधिर
(ख) भेड़े
(ग) बर्फ
(घ) पर्वत

5. अनाथ विधवा थोड़ी देर रुकने के बाद क्या कहकर पुनः कमीज सिलने लगी?

(क) हे कृष्ण
(ख) हे राम
(ग) हे प्रभु
(घ) हे ईश्वर।

उत्तर:

1. (घ)
2. (ग)
3. (ख)
4. (क)
5. (ख)

अति लघूत्तरात्मक प्रश्न

प्रश्न 1. "भोले भाव मिलैं रघुराई। यह कथन किसका है?

उत्तर: "भोले भाव मिलें रघुराई"- यह गुरु नानक का कथन है।

प्रश्न 2. "बरफानी देशों में वह मानो विष्णु के समान क्षीरसागर में लेटा है। यह कथन किसके बारे में है?

उत्तर: यह कथन बर्फीले प्रदेशों में रहकर भेड़ चराने वाले गड़रियों के बारे में है।

प्रश्न 3. गड़रिया और उसके परिवार की पूजा किसको कहा गया है?

उत्तर: भेड़ों की सेवा को गड़रिया और उसके परिवार की पूजा कहा गया है।

प्रश्न 4. "मेरी आँखों के सामने ब्रह्मानन्द का समां बाँध दिया। लेखक को ब्रह्मानन्द किससे प्राप्त हुआ?

उत्तर: गड़रिये की कन्याओं को पहाड़ी राग अलापते तथा नृत्य करते देखकर लेखक को ब्रह्मानन्द प्राप्त हुआ।

प्रश्न 5. पुस्तक हाथ में आते ही लेखक को कैसा लगता है?

उत्तर: पुस्तक हाथ में आते ही लेखक को भरतमिलाप के समान आनन्द प्राप्त होता है।

प्रश्न 6. "इसको पहनना मेरी तीर्थयात्रा है" -विधवा द्वारा सिली हुई कमीज को पहनना तीर्थयात्रा क्यों है?

उत्तर: विधवा द्वारा सिली हुई कमीज में सिलाई करने वाली स्त्री के प्रेम तथा पवित्रता के भाव मिले हुए हैं। ये गुण तीर्थयात्रा करने से मिलते हैं। इसीलिए कमीज को पहनना तीर्थयात्रा के समान है।

प्रश्न 7. होटल के बने भोजन को नीरस क्यों कहा गया है?

उत्तर: होटल में भोजन बनाने वाला व्यक्ति किसी के प्रति प्रेमभाव से भरकर भोजन नहीं बनाता। इसलिए उसका बनाया भोजन आनन्ददायक नहीं होता।

प्रश्न 8. प्रात:काल चूल्हे के भीतर जलती आग लेखक को कैसी लगती है?

उत्तर: प्रात:काल लेखक की प्रेयसी चूल्हे में आग जलाती है। यह आग लेखक को पूर्व दिशा के आकाश में छाई लालिमा से ज्यादा लाल प्रतीत होती है।

प्रश्न 9. 'मन के घोड़े हार गए हैं' से क्या आशय है?

उत्तर: मन की विचार करने की शक्ति खत्म हो गई है। मन ठीक तरह से नहीं सोच पाता।

प्रश्न 10. नया साहित्य कहाँ उत्पन्न हो गया?

उत्तर: नया साहित्य मजदूरों के हृदय में उत्पन्न हो गया।

प्रश्न 11. कामनासहित होकर भी मजदूरी निष्काम क्यों होती है?

उत्तर: मजदूरी का बदला नहीं दिया जा सकता। अत: कामनासहित होने पर भी वह निष्काम होती है।

प्रश्न 12. सच्ची फकीरी का अनमोल भूषण क्या है?

उत्तर: मजदूरी और श्रम सच्ची फकीरी का अनमोल भूषण हैं।

लघूत्तरात्मक प्रश्न

प्रश्न 1. 'मजदूरी और प्रेम' निबन्ध में लेखक ने किसके बारे में लिखा है?

उत्तर: मजदूरी और प्रेम' सरदार पूर्ण सिंह का प्रसिद्ध निबंध है। इसके लेखक ने मजदूरों के श्रम तथा उसके सच्चे मूल्य का विवेचन किया है। किसान के खेत में किए गए श्रम तथा गड़रिये द्वारा भेड़ चराने के कार्य का प्रतिदान पैसों से नहीं चुकाया जा सकता।

उनका मूल्य परस्पर प्रेम करके ही चुकाया जा सकता है। शारीरिक श्रम जीवन की शुद्धता और स्वास्थ्य के लिए आवश्यक है। उसके अभाव में मानसिक चिन्तन का रूप विकृत हो जाता है।

प्रश्न 2. "खेती उसके ईश्वरी प्रेम का केन्द्र है"- किसान ईश्वर की उपासना किस तरह करता है?

उत्तर: किसान अपने खेत में रात-दिन श्रम करता है। खेत उसकी हवनशाला है। उसमें वह अपने जीवन का हवन करता है। उसके खेत में उत्पन्न हुए चावल के लम्बे और सफेद दाने तथा लाल गेहूँ इस हवनकुंड से उठने वाली आग की लपटें हैं।

वह अन्न, फल, फूल में आहुति देता हुआ-सा दिखाई देता है। वह अन्न पैदा करने में ब्रह्मा के समान है। खेती करके ही वह ईश्वर की उपासना करता है।

प्रश्न 3. किसान ईश्वर की पूजा किस तरह करता है?

उत्तर: किसान शास्त्र नहीं पढ़ा है। वह जप-तप नहीं करता है। वह मंदिर, मस्जिद, गिरजे में नहीं जाता। संध्या-वंदन आदि उसको नहीं आता। ज्ञान, ध्यान के बारे में वह नहीं जानता। ईश्वर की पूजा वह अपने खेत में फसलों की देखभाल में श्रम करके ही कर लेता है। अपने पशुओं के पालन-पोषण में मेहनत करके वह ईश्वर का भजन कर लेता है। वह श्रमपूर्ण, सरल और संतुष्ट जीवन बिताकर ही ईश्वर की पूजा की विधि पूरी कर लेता है।

प्रश्न 4. गुरुनानक का कथन "भोले भाव मिलें रघुराई" किसान के जीवन में किस तरह घटित होता है?

उत्तर: किसान का जीवन सरल होता है। वह नि:स्वार्थ भाव से अपने खेत में परिश्रम करता है। वह पूजा-पाठ के बाहरी दिखावटी स्वरूप को नहीं अपनाता । उसके सादा तथा पवित्र श्रमपूर्ण जीवन के कारण ईश्वर उसको स्वयं दर्शन देते हैं। उसके प्रत्येक कार्य में ईश्वर का स्वरूप व्यक्त होता है। गुरु नानक का कहना है कि भोले-भाले लोगों को ही ईश्वर की प्राप्ति होती है। किसान को भी ईश्वर का खुला दीदार मिलता है।

प्रश्न 5. लेखक ने किसान के लिए किन विशेषणों का प्रयोग किया है?

उत्तर: लेखक को किसान विविध स्वरूप में दिखाई देता है। उसने उसके लिए अनेक विशेषणों का प्रयोग किया है। उसने किसान को प्रकृति का जवान साधु तथा बिना मुकुटवाला गोपाल (श्रीकृष्ण) कहा है।

उसका जीवन एक त्यागी फकीर के समान है। उसकी जरूरतें बहुत सीमित हैं। लेखक ने उसको गायों का मित्र तथा बैलों का हमजोली कहा है। वह पक्षियों का हमराज है। वह महाराजाओं का अन्नदाता तथा बादशाहों को सिंहासन पर बैठाने वाला है। किसान को भूखे-नंगों का पालनहार, खेतों की वाली तथा समाज के लिए फूलों के बगीचे को माली कहा गया है।

प्रश्न 6. गड़रिये के सरल जीवन का संक्षेप में वर्णन कीजिए।

उत्तर: एक बार लेखक ने एक बुड्ढे गड़रिये को देखा। वह जंगल में था। उसकी सफेद ऊन वाली भेड़े पेड़ों की हरी पत्तियाँ खा रही थीं। वह बैठा हुआ ऊन कात रहा था। वह आकाश की ओर देख रहा था। उसके बाल सफेद थे परन्तु वह रोगरहित था। उसकी आँखों में ईश्वर प्रेम की लाली छाई थी। उसके कपोलों पर स्वास्थ्य की लालिमा थी। उस बर्फीले प्रदेश में वह क्षीर सागर में लेटे हुए विष्णु जैसा लग रहा था।

प्रश्न 7. लेखक ने अपने भाई से यह क्यों कहा- "अब मुझे भी भेड़े दो।

उत्तर: लेखक ने गड़रिये और उसके परिवार को देखा। वह उसके मूक और संतुष्ट जीवन से प्रभावित हुआ। गड़रिये को परिवार पढ़ा-लिखा नहीं था किन्तु उसका जीवन सच्चे ईश्वरीय ज्ञान से ओत-प्रोत था। उसके अन्त:करण के चक्षु खुले हुए थे।

लेखक ने समझ लिया कि पुस्तकों के पढ़ने से प्राप्त ज्ञान सच्चा ज्ञान नहीं है। पंडितों की बातें अर्थहीन हैं।

गड़रिये के समान ही मूक जीवन अपनाने से ही उसका कल्याण होगा। प्राकृतिक जीवन ही कल्याणकारी है। प्रकृति की निकटता में रहने वाले लोगों को ही ईश्वर के दर्शन होते हैं।

प्रश्न 8. किसी मजदूर की मजदूरी रुपयों-पैसों में क्यों नहीं दी जा सकती?

उत्तर: किसी मजूदर की मजदूरी रुपयों-पैसों में नहीं दी जा सकती । मजदूर ने अपने शरीर के अंगों से श्रम किया है। ये अंग ईश्वर ने बनाए हैं। जो पैसे उसे दिए गए हैं वह धातु से बने हैं। उस धातु को बनाने वाला भी ईश्वर ही है। इस तरह उसके श्रम की सच्ची मजदूरी उसको नहीं दी जा सकती। यह तो एक तरह की दिल्लगी है। उसकी मजदूरी का भुगतान प्रेमभरी सेवा के द्वारा ही हो सकता है।

प्रश्न 9. 'मेरे अन्तःकरण में रोज भरतमिलाप का-सा समां बँध जाता है।'–भरतमिलाप का-सा समां बँधने का तात्पर्य क्या है?

उत्तर: लेखक जब पुस्तक उठाता है तो उसको लगता है कि जैसे उसके हाथ जिल्दसाज के हाथों का स्पर्श कर रहे हैं। जिल्दसाज उसका आमरण मित्र बन चुका है। उसने लेखक की एक पुस्तक की जिल्द बाँध कर उसको एक अनुपम प्रेम की भेंट दी है। जिल्दसाज की याद में लेखक का मन आनन्द से उसी प्रकार भर उठती है जिस प्रकार राम और भरत का मन एक दूसरे से मिलकर आनन्द भरसे उठा था।

प्रश्न 10. कमीज को अनाथ विधवी किस प्रकार सी रही है?

उत्तर: एक अनाथ विधवा गाढ़े की कमीज सिल रही है। वह पूरी रात बैठकर कमीज सिलती रही है। वह अपने दु:ख पर रोती जो रही है। कल न दिन में खाना मिला न रात में। वह एक एक टाँके पर आशा करती है कि कल कमीज पूरी सिल जाएगी तो उसको खाना मिलेगा। कमीज उसके घुटनों पर फैली है। थककर वह रुक जाती है। कुछ देर बाद 'हे राम' कहकर वह पुन: उसे सिलने लगती है। वह ईश्वर के ध्यान में लीन है।

प्रश्न 11. 'शब्दों से तो प्रार्थना हुआ नहीं करती' फिर प्रार्थना किस प्रकार होती है? लेखक के मत से सहमति अथवा असहमति व्यक्त करके उत्तर दीजिए।

उत्तर: लेखक को मानना है कि सच्ची प्रार्थना हृदय से निकलती है। उसके लिए शब्दों की जरूरत नहीं होती। वह मूक होती है। श्रमिक के सुख-दु:ख, उसका प्रेम, उसकी पवित्रता आदि समस्त बातें उसके श्रम से जुड़ जाती हैं। सच्ची प्रार्थना ऐसा ही श्रम करने से होती है।

वह मूक होती है। ईश्वर ऐसी प्रार्थना को अवश्य सुनता है तथा तत्काल सुनता है। लेखक का कथन सही है। सभी के प्रति प्रेम-भाव रखते हुए परिश्रम करके उनकी सेवा करने से ही सच्ची प्रार्थना होती है।

प्रश्न 12. राफेल आदि द्वारा बनाए गए चित्रों तथा कैमरे से खींचे गए फोटो में क्या अंतर होता है तथा क्यों?

उत्तर: राफेल आदि चित्रकार अपनी तूलिका से चित्र बनाते हैं। उनमें उनके मन की भावनायें सम्मिलित होती हैं। चित्र को देखते ही चित्रकार की आत्मा तथा उसके अन्तर्मन के दर्शन होने लगते हैं। इन चित्रों से

उनकी कला-कुशलता का भी पता चलता है। इसके विपरीत कैमरे की सहायता से खींचे गए फोटो निर्जीव होते हैं। उनमें फोटोग्राफर की भावनाएँ दिखाई नहीं देतीं । हाथ से बने चित्र मनुष्यों की बस्ती की तरह सजीव तथा फोटो किसी श्मशान की तरह निर्जीव प्रतीत होते हैं।

प्रश्न 13. लेखक द्वारा दिए गए उदाहरण का उल्लेख करके बताइये कि हाथ की मेहनत से चीज में रस किस तरह भर जाती है?

उत्तर: हाथ की मेहनत से चीज में रस भर जाता है। ऐसा रस मशीनों से बनी चीजों में नहीं होता। लेखक खेत में आलू बोता है। वह उसमें पानी देता है। उसके आस-पास पैदा हुई खर-पतवार की निराई-गुड़ाई करता है। यह आलू उसने अपने श्रम से तैयार किया है।

इसमें उसके मन के भाव, प्रेम और पवित्रता सूक्ष्म रूप से मिले हुए हैं। इस आलू में उसको बड़ा स्वाद मिलता है। उतने स्वादिष्ट डिब्बे में बन्द बाजार में मिलने वाले खाद्य पदार्थ नहीं होते।

प्रश्न 14. होटल में बने भोजन तथा घर में बने भोजन में क्या अन्तर है? इस सम्बन्ध में लेखक के मत तथा अपने विचारों का भी उल्लेख कीजिए।

उत्तर: होटल में बने भोजन में वह स्वाद नहीं होता जो घर में बने हुए भोजन में होता है। घर में लेखक की पत्नी भोजन बनाती है। वह स्वयं अनाज पीसती है, छलनी में आटा छानती है, स्वयं काटकर लाई गई लकड़ियों से चूल्हा जलाकर रोटी सेंकती है। वह रोटी लेखक को अमूल्य लगती है।

उसको खाने में योग करने जैसा आनन्द आता है। होटल में भोजन बनाने वाले भावशून्य होते हैं। वे मशीन की तरह काम करते हैं। उनमें लेखक की पत्नी जैसे पवित्र मनोभाव नहीं होते। मेरे विचार से लेखक का कथन सही है। मनुष्य एक-दूसरे के साथ मन के प्रेम तथा त्याग के कारण ही जुड़ते हैं। किसी अपने द्वारा प्रेम से परोसा गया रूखा-सूखा भोजन भी स्वादिष्ट लगता है।

प्रश्न 15. लेखक ने अपनी प्रेयसी की दिनचर्या का जो वर्णन प्रस्तुत किया है, उसको अपने शब्दों में लिखिए।

उत्तर: सबेरा होते ही लेखक की प्रेयसी बिस्तर से उठ जाती है। वह गाय दुहती है। गाते-गाते चक्की से अनाज पीसती है। वह लाल धडे में मीलों दूर से ठंडा पानी भरकर लाती है। वह जंगल से लकड़ी चुनकर लाती है तथा चूल्हा जलाती है। आटे को छलनी से छानकर चूल्हे की आग में रोटियाँ सेंकती है। उस रोटी में उसका त्याग तथा प्रेम भरा रहता है। लेखक को इस रोटी में योग-साधना जैसा आनन्द प्राप्त होता है।

प्रश्न 16. लेखक ने अपनी प्रियतमा का वर्णन करते समय किस शैली का प्रयोग किया है?

उत्तर: लेखक ने अपनी प्रियतमा को सजीव चित्रण किया है। उसका वर्णन करते समय लेखक ने वर्णनात्मक तथा भावात्मक शैलियों का प्रयोग किया है। इसमें चित्रात्मक शैली का प्रयोग भी किया गया है। लेखक ने शब्द-चयन पर ध्यान दिया है। छोटे-छोटे वाक्यों में अद्‌भुत प्रवाह है। इस कारण वर्णित व्यक्ति का सजीव चित्र स्पष्ट उभरकर सामने आता है। इसको और अधिक प्रभावपूर्ण बनाने के लिए आलंकारिक शैली को भी अपनाया गया है।

प्रश्न 17. "यही धर्म हैं'- सरदार पूर्ण सिंह के अनुसार धर्म क्या है?

उत्तर: सरदार पूर्ण सिंह के मत में मनुष्य की पूजा करना ही ईश्वर की पूजा है। मनुष्य तल्लीनतापूर्वक अपना काम करे तो स्वर्ग प्राप्त की इच्छा भी नहीं रहती। ईश्वर मंदिर, मस्जिद, गिरजाघर तथा धार्मिक पुस्तकों में नहीं मिलता। वह मनुष्य की अनमोल आत्मा में रहता है। उसको मानव सेवा के द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है। मानव से प्रेम करना तथा उसके लिए श्रम करना ही सच्चा धर्म है।

प्रश्न 18. पद्मासन निष्प्रयोज्य क्यों सिद्ध हो चुके हैं? ईश्वर किन आसनों से प्राप्त हो सकता है?

उत्तर: मजदूरी अर्थात् शारीरिक श्रम के अभाव में मानसिक चिन्तन बेकार रहता है। श्रम के अभाव में धामिक क्रियाएँ तथा कला- कौशल अधूरे हैं। पद्मासन करने से ईश्वर प्राप्त नहीं होता। खेत जोतने, बोने, फसल काटने तथा मजदूरी करने में शरीर की जो मुद्राएँ बनती हैं, ईश्वर का साक्षात्कार उन्हीं से हो सकता है।

लकड़ी का काम करने वाले बढ़ई, ईंट-पत्थर का काम करने वाले मिस्त्री और संतराश, लुहार, किसान आदि कवि, योगी, महात्मा आदि के समान ही श्रेष्ठ मनुष्य होते हैं। इनके श्रम-रूपी आसन ही ईश्वर-प्राप्ति करा सकते हैं।

प्रश्न 19. आजकल मनुष्य की चिन्तन शक्ति क्यों थक गई है? इससे क्या हानि होने की संभावना है? इस हानि से किस प्रकार बचा जा सकता है?

उत्तर: आजकल मनुष्य की चिन्तन शक्ति थक गई है। विचारक मानसिक चिन्तन में डूबे रहते हैं। वे शारीरिक श्रम नहीं करते। इससे जीवन नीरस हो गया है। स्वप्न पुराने हो गए हैं। कविता में नयापन नहीं है। बिना मजदूरी के चिन्तन बेकार हो गया है।

इस हानि से बचने के लिए शारीरिक श्रम करना चाहिए। प्रेम मजदूरी से ही इस हानि से रक्षा हो सकती है। साहित्यकारों तथा कवियों को मेहनत के काम करने होंगे तभी नया साहित्य और मौलिक कविता का जन्म होगा।

प्रश्न 20. नया साहित्य तथा नई कविता कहाँ से निकलेंगे? नए साहित्यकार तथा कवि साहित्य-साधना किस प्रकारे करेंगे?

उत्तर: नया साहित्य मजदूरों के हृदय से निकलेगा। नई कविता उनके कंठ से फूटेगी । ये नए साहित्यकार तथा नए कवि आनन्द पूर्वक खेतों में काम करेंगे। वे कपड़ों की सिलाई करेंगे तथा जूते तैयार करेंगे। वे लकड़ी की चीजें बनायेंगे तथा संतराश बनकर पत्थरों की कटाई-छटाई करेंगे। उनके हाथ में कुल्हाड़ी तथा सिर पर टोकरी होगी। उनके सिर तथा पैर नंगे होंगे। वे धूल में लिपटे और कीचड़ में सने होंगे। वे वन में जाकर लकड़ी काटेंगे। इस तरह शारीरिक श्रम ही उनकी साहित्य साधना होगा।

प्रश्न 21. फकीरी अपने आसन से कब गिर जाती है? उसकी रक्षा कैसे हो सकती है?

उत्तर: मजदूरी तथा फकीरी मनुष्य के विकास के लिए अत्यन्त आवश्यक हैं। बिना मजदूरी किए फकीरी

का उच्च भाव शिथिल हो जाता है। फकीरी अपने आसन से गिर जाती है। श्रमशीलता से विमुख होने पर फकीरी में ताजगी तथा नवीनता नहीं रहती। वह बासी हो जाती है। उसके आदर्श पतित हो जाते हैं। फकीरी की मौलिकता बनाए रखने तथा उसकी श्रेष्ठता की रक्षा के लिए उसका श्रम से जुड़ा रहना जरूरी है।

प्रश्न 22. मनुष्य आलस्य को सुख कब मानता है? उसको इससे बचने के लिए क्या करना चाहिए?

उत्तर: जब मनुष्य श्रम से विमुख हो जाता है और निठल्लापन उसको घेर लेता है तब उसको लगता है कि आलस्य अत्यन्त सुखद है। सबेरा होने पर भी उसको बिस्तर पर पड़े रहना अच्छा लगता है। आलस्य उसको घेर लेता है तथा वह उसको प्रिय और सुख देने वाला प्रतीत होता है।

आलस्य से बचने के लिए मनुष्य को बिस्तर त्याग देना चाहिए। प्रात:काल के सुन्दर प्राकृतिक दृश्यों का आनन्द लेना चाहिए। सबेरे बाग की सैर करनी चाहिए। फूलों की सुन्दरता देखनी चाहिए। शीतल ठंडी हवा में घूमना चाहिए।

प्रश्न 23. मनुष्य का साधारण जीवन ईश्वर का भजन कैसे बन सकता है?

उत्तर: मजदूरी से विमुख होकर फकीरी अपने ऊँचे स्थान से पतित हो जाती है। मनुष्य ईश्वर को पाने के लिए तरह-तरह के साधन अपनाता है परन्तु उसका साक्षात्कार करने में असमर्थ रहता है। जब वह श्रम को अपना लेता है तथा उसको जीवन का अंग बना लेता है तब उसको अपने जीवन के साधारण कार्यों को करके ही ईश्वर की निकटता प्राप्त हो जाती है। मजदूर के अनाथ नयन, अनाथ आत्मा और अनाश्रित जीवन की बोली सीखने पर मनुष्य का साधारण जीवन ईश्वर का भजन बन जाता है।

प्रश्न 24. "यह सारा संसार कुटुम्बवत् है।" "मजदूरी और प्रेम' निबंध के आधार पर इसको स्पष्ट करके समझाइये।

उत्तर: यह सारा संसार कुटुम्बवत् है। संसार के सभी मनुष्यों का पिता एक ही परमात्मा है। एक ही ईश्वर की संतान होने के कारण वे सब आपस में भाई-बहन हैं। किसी मनुष्य का नाम, पता पूछना तथा उसके पिता-प्रपिता का नाम पूछना और तब उसको पहचानना उचित नहीं है। अपने ही भाई-बहनों के पिता का नाम पूछना मूर्खता है। यह समझना चाहिए कि सब एक ही ईश्वर से उत्पन्न हुए हैं और एक ही परिवार के सदस्य हैं।

प्रश्न 25. "मजदूरी और फकीरी का अन्योन्याश्रित संबंध है' तर्क सहित स्पष्ट कीजिए।

उत्तर: मनुष्य की विविध कामनाएँ उसको स्वार्थ के वशीभूत कर घुमाती रहती हैं। परन्तु उसका जीवन आध्यात्मिक सौरमण्डल की चाल है। अंतत: यह चाल जीवन का परमार्थ रूप है। यहाँ स्वार्थ का अभाव है।

जब स्वार्थ कोई वस्तु है ही नहीं तब निष्काम और कामनापूर्ण कर्म करना दोनों ही एक बात हैं। उनमें कोई अन्तर नहीं है। अत: मजदूरी और फकीरी का अन्योन्याश्रय संबंध है।

निबन्धात्मक प्रश्न

प्रश्न 1. "जब कभी मैं इन बेमुकुट के गोपालों के दर्शन करता हूँ, मेरा सिर स्वयं ही झुक जाता है।" लेखक का सिर किसके सामने झुक जाता है तथा क्यों?

उत्तर: सरदार पूर्ण सिंह ने अपने प्रसिद्ध निबंध 'मजदूरी और प्रेम' में किसानों को बेमुकुट का गोपाल कहा है। श्रीकृष्ण गोपालन करते थे। उनके सिर पर मोर मुकुट था किन्तु किसान बिना मुकुट के ही अपने प्रेम, त्याग और मजदूरी के कारण लेखक की श्रेष्ठता का पात्र बन गया है।

वह खेत ही हवनशाला में अपने तन का हवन करता है। प्रत्येक फूल, फल, पत्ते में वह आहुति देता दिखाई देता है। वह अन्न पैदा करने में ब्रह्मा के समान है। वह मौन रहकर प्रेमभाव के साथ श्रम करने में लगा रहता है।

किसान का जीवन सरल है। वह साग-पात खाता है और नदियों का ठंडा पानी पीता है। वह पढ़ा-लिखा नहीं है। पूजा-प्रार्थना मंदिर आदि से उसे सरोकार नहीं है। उसे गायों से प्रेम है। वह उनकी सेवा करता है। वह नेत्रों की मौन भाषा में प्रार्थना करता है।

उसका जीवन प्रकृति की निकटता में बीतता है। वह अतिथि सत्कार करने वाला है। वह किसी को धोखा नहीं देता। कोई उसे धोखा दे तो वह जान नहीं पाता। वह अत्यन्त भोला है। ईश्वर उसके भोलेपन पर रीझकर उसे साक्षात दर्शन देता है।

उसकी फैंस की झोंपड़ी से छनकर सूर्य और चन्द्रमा का प्रकाश उसके बिस्तर पर पड़ता है। उसके पैर नंगे हैं। कमर में लँगोटी और सिर पर टोपी लगाये, हाथ में लाठी लिए जाता किसान अपने त्याग और सादगी के कारण फकीर जैसा लगता है। वह अन्नदाता है। राजा-महाराजाओं तथा गरीब लोगों का पेट भरने वाला है। उसको देखकर लेखक का सिर श्रद्धापूर्वक झुक जाता है।

प्रश्न 2. "बरफानी देशों में वह मानो विष्णु के समान क्षीरसागर में लेटा है।"- लेखक का यह कथन किसके बारे में है? 'मजदूरी और प्रेम' नामक निबंध के आधार पर उसका वर्णन कीजिए।

उत्तर: लेखक ने एक बूढ़े गड़रिये को देखा। जंगल में उसकी भेड़े पेड़ों की पत्तियाँ खा रही हैं। वह ऊन कात रहा है। उसके बाल सफेद हैं किन्तु मुख पर स्वास्थ्य की लालिमा है। जिस प्रकार भगवान विष्णु क्षीर-सागर में रहते हैं, उसी प्रकार वह बर्फीले प्रदेश में निवास करता है।

उसकी दो जवान कन्यायें हैं। उन्होंने अपने माता-पिता तथा भेड़ों के सिवाय किसी को नहीं देखा है। उनका यौवन पवित्र है। वे पिता के साथ जंगल में घूमर्ती और भेड़े चराती हैं। उसकी पत्नी बैठी रोटी पका रही है। उसका परिवार बेमकान, बेघर तथा बेनाम है। वे जहाँ भी जाते हैं, एक कुटिया बना लेते हैं और प्रकृति के सान्निध्य में रहते हैं। उनके जीवन में बर्फ की पवित्रता तथा बर्फ की सुगंध है।

भेड़ों की सेवा ही उनकी ईश्वर पूजा है। किसी भेड़ के बीमार होने पर वे दिन-रात उसकी देखभाल करते हैं। उसके ठीक होने पर वे मंगल मनाते हैं। उसकी कन्याओं को पहाड़ी गीत गाते और नाचते देखकर,

उनकी सरलता, प्रकृति के प्रति निकटता, प्रेम, सेवा आदि के भाव देखकर लेखक के मन में उसके जैसा जीवन व्यतीत करने की इच्छा पैदा हुई । उसने समझा कि मूक जीवन से ही उसका कल्याण होगा। भौतिक ज्ञान से परमात्मा प्राप्त नहीं होता। पंडितों के तर्क-वितर्क बेकार हैं। सरल, पवित्र जीवन से ही परमात्मा को स्नेह प्राप्त होता है तथा मनुष्य का कल्याण होता है।

प्रश्न 3. "वाह क्या दिल्लगी है!" लेखक ने दिल्लगी किसको कहा है तथा क्यों? इस विषय में आपका क्या कहना है?

उत्तर: लेखक का मानना है कि किसी श्रमिक के श्रम का मूल्य कुछ सिक्कों में नहीं चुकाया जा सकता। उसने अपने शरीर के अंगों-हाथ, पैर, आँख, कान इत्यादि से श्रम किया है और आपका काम किया है। उसके शरीर के इन अंगों की रचना करने वाला ईश्वर है।

ईश्वर की चीज का प्रतिदान ईश्वर की बनी चीजों से देना संभव नहीं है। यह तो एक प्रकार की दिल्लगी है। मजदूर की मजदूरी कुछ सिक्कों से नहीं हृदय के पवित्र प्रेम से ही दी जा सकती है। मजदूर को ऋण एक दूसरे की प्रेमपूर्ण सेवा से ही चुकाया जा सकता है, अन्न-धन देकर नहीं। उन दोनों को बनाने वाला तो ईश्वर ही है। वे मनुष्य के द्वारा निर्मित नहीं हैं, उन पर उसका कोई अधिकार नहीं है।

लेखक का विचार मानवता की उच्च धारणा से प्रभावित है। मजदूर इसी समाज का सदस्य है। मजदूरी करके वह समाज के अनेक कार्य करता है। उसको प्रतिदान उसके साथ स्नेहपूर्ण व्यवहार करके ही दिया जा सकता है। समाज में श्रम को सम्मान नहीं मिलती।

उसको छोटा समझा जाता है। उसको वह महत्व नहीं मिलता जो मिलना चाहिए। मेरे विचार से श्रम को तुच्छ मानना तथा उसका तिरस्कार करना ठीक नहीं है। उसके श्रम के बदले चार पैसे उसके हाथ पर रखने को लेखक ने दिल्लगी कहा है। सचमुच यह क्रूरतापूर्ण दिल्लगी ही है।

प्रश्न 4. "ईश्वर तो कुछ ऐसी ही मूक प्रार्थनाएँ सुनता है और तत्काल सुनता है।"-ईश्वर कैसी प्रार्थनाएँ सुनता है? 'मजदूरी और प्रेम' पाठ के आधार पर उत्तर दीजिए।

उत्तर: एक अनाथ विधवा ने लेखक के लिए गाढ़े की कमीज सिली। उसने पूरी रात जागकर काम किया। काम करते-करते उसकी आँखों में आँसू आ जाते थे उसको अपना दुःख भरा जीवन याद आ जाता था। कल दिन में उसने कुछ नहीं खाया था। रात में भी खाना नहीं मिला।

वह सोच रही थी कि कमीज की सिलाई पूरी होने पर कल उसको खाना मिलेगा। उसकी एक-एक टाँके से आशा बँधी थी। काम करते-करते वह थक गई। कमीज उसके घुटने पर फैली थी। उसने कुछ देर रुककर आराम किया। उसकी खुली आँखें ईश्वर के ध्यान में लीन थीं। कुछ देर बाद 'हे राम' कहकर वह पुनः कमीज सिलने लगी।

लेखक की मान्यता है कि उसके श्रम में उसका प्रेम, पवित्रता तथा सुख-दुःख मिले हुए हैं। वह कमीज नहीं एक दिव्य वस्त्र है। उसको पहनना तीर्थयात्रा करने के समान है। ईश्वर ऐसे श्रमशील पवित्र लोगों की मूक प्रार्थना अवश्य सुनता है और बिना विलम्ब किए सुनता है। शब्दों में की गई प्रार्थना प्रभावहीन होती है जो शब्द मन से निकलते हैं, वही प्रार्थना ईश्वर के यहाँ सुनी जाती है। प्रेम और सेवा से परिपूर्ण श्रम ही सच्ची

प्रार्थना है। उसके लिए शब्दों की जरूरत नहीं होती, न किसी मंदिर, मस्जिद में जाने की आवश्यकता होती है। ऐसा काम किसी संध्या, नमाज, प्रार्थना से कम नहीं होता।

प्रश्न 5. "मनुष्य की पूजा ही सच्ची ईश्वर पूजा है'- इस कथन का आशय स्पष्ट करते हुए इसके बारे में अपने विचार व्यक्त कीजिए।

उत्तर: लेखक ईश्वर की पूजा के परम्परागत ढंग से भिन्न ईश्वर-पूजा की बात कर रहा है। संसार में लोग मंदिर, मस्जिद में जाते हैं, प्रार्थना-कीर्तन करते हैं, नमाज अदा करते हैं। इस प्रकार वे ईश्वर की पूजा करते हैं और अपने जीवन में खुशहाली की कामना करते हैं।

वे मनुष्य की उपेक्षा करते हैं। उससे प्रेम नहीं करते। उसके श्रम तथा सेवा का तिरस्कार करते हैं। लेखक कहता है कि मनुष्य की उपेक्षा करके ईश्वर की पूजा नहीं हो सकती। सच्ची ईश्वर पूजा मनुष्य की पूजा करना ही है। मनुष्य के श्रम तथा प्रेम और स्वार्थ का तिरस्कार करना नास्तिकता है। मनुष्य के श्रम का मूल्य पैसों से नहीं चुकाया जा सकता। ऐसा करना ईश्वर का अपमान है।

मंदिर, मस्जिद, गिरजाघर आदि में ईश्वर नहीं रहता। वह मजदूरी करने वालों के दिलों में रहता है। आगे से ईश्वर की तलाश इन स्थानों पर नहीं करनी चाहिए। धार्मिक पुस्तकों के पढ़ने से भी ईश्वर नहीं मिलता। मनुष्य और उसकी प्रेमभरी मजदूरी का सम्मान करना ही ईश्वर की सच्ची पूजा है। बिना हाथ के काम के धार्मिक चिन्तन बेकार है।

मजदूरी की धूल मुँह पर लगने से ही धर्म की उन्नति होती है। खेत में काम करने, लकड़ी काटने, पत्थर तराशने आदि के आसन से ही हम ईश्वर-प्राप्ति कर सकते हैं। मेरा मानना है कि मनुष्य और उसके श्रम की निन्दा करके ईश्वर प्राप्त नहीं होता। धर्म के परम्परागत तरीके ईश्वर की पूजा में सहायक नहीं होते।

प्रश्न 6. सरदार पूर्ण सिंह ने नई कविता किसको कहा है? इसकी क्या विशेषता है?

उत्तर: सरदार पूर्ण सिंह की नई कविता वह नहीं है जो हिन्दी साहित्य के आधुनिक काल के साठोत्तरी युग में जन्मी है। नई कविता से लेखक का आशय यह है कि कवि मानसिक चिन्तन के साथ ही शारीरिक श्रम का महत्व भी समझता है। वह लेखनी के साथ ही खेत में हल भी चलाता है।

हाथ में फावड़ा लेकर सड़क तैयार करता है। लेखक के अनुसार नई कविता मजदूरों के कंठ से फूटेगी, जो अपना जीवन शारीरिक श्रम के लिए अर्पित करेंगे वही नई कविता के जन्मदाता होंगे। जिनके हाथ में कुल्हाड़ी और सिर पर टोकरी होगी, जिनके हाथपैर धूल और कीचड़ से सने होंगे, वही नई कविता के उन्नायक कवि होंगे।

चरखा कातने वाली स्त्रियों के गीत संसार के सभी देशों के कौमी गीत होंगे। जंगल में लकड़ी काटने वालों का स्वर भविष्य के संगीतकारों के लिए ध्रुपद और मल्हार का काम करेगा।

लेखक का मत है कि नई कविता कोरी बौद्धिक कल्पना नहीं होगी। मजदूरों की मजदूरी की पूजा से ही वह फलित होगी। कलारूपी धर्म की तभी वृद्धि होगी। मजदूरी का दूध पीकर ही भविष्य के कवि जीवित रहेंगे। नई कविता मानसिक विचार मात्र नहीं होगी।

प्रश्न 7. सच्ची फकीरी का अनमोल भूषण क्या है? 'मजदूरी और प्रेम' निबंध के आधार पर लिखिए।

उत्तर: प्राचीन काल से ही सच्चा फकीर उसको माना जाता है जो शारीरिक श्रम से विरत होकर, सांसारिक कार्यों से मुक्त होकर किसी एकान्त स्थल पर चिन्तन-मनन करता है और ईश्वर का ध्यान करने में समय व्यतीत करता है। लेखक इस मत का समर्थन नहीं करता । निकम्मे रहकर चिन्तन-मनन करने वाले पथ भ्रष्ट हो जाते हैं तथा उनके विचार बासी हो जाते हैं। उनसे समाज का हित नहीं हो सकता।

धार्मिक चिन्तन बिना शरीर श्रम के अधूरा है। वह सही मार्ग दिखाने वाला नहीं पथभ्रष्ट करने वाला है। जब साधु-सन्त, पंडित, मौलवी, पादरी आदि हल, कुदाल, खुरपा लेकर काम करते हैं तभी उनके उपदेश और विचार फलदायक होते हैं तभी उनमें नवीनता तथा मौलिकता उत्पन्न होती है। मजदूरी करने वाले को एक नया ईश्वर दिखाई देने लगता है।

शारीरिक श्रम ही सच्ची फकीरी का अनमोल भूषण है। निकम्मापन मनुष्य की चिन्तन शक्ति को थका देता है। फकीरी में वह आनन्द भाव नहीं रहता जो श्रमिक के श्रम में होता है।

संसार के अनेक महापुरुष, विचारक तथा साहित्यकार फकीरों के समान जीवन बिताते रहे हैं, उनके जीवन में शरीर-श्रम से विमुखता नहीं है। ऐसे महामानवों में जोन ऑफ आर्क, टाल्सटाय, उमर खैयाम, खलीफा उमर, सन्त कबीर, भक्त रैदास, भगवान श्रीकृष्ण तथा गुरुनानक आदि के नामों का उल्लेख किया जा सकता है।

प्रश्न 8. प्रार्थना में शब्द महत्वपूर्ण होते हैं अथवा श्रम में रत रहते हुए मूक निवेदन? सरदार पूर्ण सिंह तथा सन्त कबीर इस संबंध में क्या कहते हैं? क्या उनका समर्थन समाज करता दिखाई देता है?

उत्तर: संसार में सभी धर्मों में प्रार्थना होती है जो शब्दों में ही की जाती है। शब्दों के बिना प्रार्थना नहीं होती। प्रार्थना के लिए शब्द महत्वपूर्ण नहीं होते। उसमें चित्ती की एकाग्रता तथा ईश्वर के प्रति समर्पण का भाव ही महत्व पूर्ण होता है। प्रार्थना का मूल मूक निवेदन ही है प्रार्थना के लिए शब्दों को महत्वपूर्ण नहीं मानते।

वह तो उनको यह कहकर अनावश्यक भी मानते हैं कि शब्दों से तो प्रार्थना हुआ ही नहीं करती। सन्त कबीर भी इस विषय में सरदार पूर्ण सिंह जैसा ही मत रखते हैं। 'जा चढ़ि मुल्ला बाँग दे क्या बहरा हुआ खुदाय' कहकर वे आत्मनिवेदन को महत्वपूर्ण मानते हैं, शब्दों को महत्वपूर्ण नहीं मानते । प्राचीन वैदिक मत के 'ध्यान' को हम शब्दहीन प्रार्थना कह सकते हैं।

वर्तमान में समाज मौन प्रार्थना का समर्थन करता दिखाई नहीं देता। धार्मिक आयोजन, उपदेश, प्रार्थना आदि शब्दों में ही होती है। इन शब्दों को तेज आवाज में प्रयोग करना भी जरूरी है। नमाज, प्रार्थना, कीर्तन, कथा, भागवत आदि आजकल बिना ध्वनि विस्तारक यंत्रों के होती दिखाई नहीं देती। इसमें प्रदर्शन की भावना प्रधान होती है, धार्मिकता नहीं ।

प्रश्न 9. सरदार पूर्ण सिंह मजदूरी को समाज के नैतिक उत्थान के लिए तो वर्तमान अर्थशास्त्री उसको आर्थिक उत्थान के लिए जरूरी मानते हैं-इस संबंध में अपने विचार तर्कपूर्ण ढंग से लिखिए।

उत्तर: 'मजदूरी और प्रेम' शीर्षक निबंध में सरदार पूर्ण सिंह ने मजदूरी को मानवता तथा समाज के लिए महत्वपूर्ण माना है। लेखक मानता है कि श्रमिक के श्रम में उसका प्रेम, पवित्रता तथा अपनत्व का भाव मिला रहता है। हम उसका मूल्य चंद सिक्कों से नहीं चुका सकते।

उसका मूल्य प्रेम और सेवाभाव द्वारा ही चुकाया जा सकता है। समाज के नैतिक उत्थान के लिए मजदूरी को मान देना आवश्यक है। उसके बिना धार्मिक तथा साहित्यक चिन्तन भी अपूर्ण रहता है। लेखक ने मजदूरी का वर्णन उसके प्रचलित स्वरूप से हटकर आसान ढंग से किया है।

वर्तमान अर्थशास्त्री उत्पादन में मजदूरी को एक साधन मात्र मानते हैं। उनका दृष्टिकोण मानवीय नहीं है। अर्थशास्त्र कहता है कि पूँजी से श्रम खरीदा जा सकता है। पूर्ण सिंह इसके विपरीत इसको आदमियों की तिजारते तथा मूर्खतापूर्ण बातें मानते हैं। आजकल श्रमिक के शोषण की बात होती है।

परन्तु अर्थशास्त्र इसको शोषण नहीं मानता। देशों की सरकारें भी मजदूरों के शोषण से पूँजीपतियों को नहीं रोक पातीं। कारखानों में श्रमिकों को एक मशीन समझा जाता है। उसको कम पैसा देकर अधिक श्रम कराया जाता है। इस तरह मजदूरी का महत्व जानते हुए भी उसको सम्मान न देकर उसका शोषण किया जाता है।

मजदूरी और प्रेम लेखक-परिचय

प्रश्न- सरदार पूर्णसिंह का जीवन-परिचय देते हुए उनकी साहित्य-सेवा का उल्लेख कीजिए।

उत्तर- जीवन-परिचय-सरदार पूर्णसिंह का जन्म एबटाबाद (वर्तमान पाकिस्तान) में सन् 1881 में हुआ था। आपकी शिक्षा रावलपिंडी तथा लाहौर में हुई। सन् 1900 में आप रसायन विज्ञान का विशिष्ट अध्ययन करने जापान गए। वहाँ स्वामी रामतीर्थ से आपकी भेट हुई।

स्वामीजी से प्रभावित होकर आपने संन्यास ग्रहणकर लिया तथा भारत लौट आए। बाद में आप देहरादून के इंपीरियल फारेस्ट इंस्टीट्यूट में रसायन विशेषज्ञ के रूप में नियुक्त हुए। आपने ग्वालियर में रहकर धार्मिक साहित्य लिखा।

पंजाब में कृषि कर्म अपनाया। चूँकि आप शिक्षक बने इसीलिए आप अध्यापक पूर्णसिंह के नाम से भी प्रसिद्ध हैं। सन् 1931 में आपका देहावसान हो गया।

साहित्यिक परिचय-

सरदार पूर्ण सिंह एक प्रतिभाशाली साहित्यकार थे। वह हिन्दी, उर्दू तथा अँग्रेजी के मर्मज्ञ विद्वान थे तथा हिन्दी के श्रेष्ठ निबंधकार थे।

आप एक विचारक चिन्तक, भावुक लेखक तथा मानवधर्म के प्रचारक थे। आपके निबंधों में नैतिकता,

अध्यात्मिकता, धार्मिकता, चमत्कारिकता तथा हृदय के सच्चे उद्गार मिलते हैं।

सरदार पूर्णसिंह की भाषा में संस्कृत के तत्सम शब्दों की प्रधानता है। शब्द चयन में आपने आवश्यकतानुसार अरबी, फारसी तथा अँग्रेजी के शब्दों को स्वीकार किया है। उसमें मुहावरों का भी प्रयोग हुआ है। आपकी भाषा समास-प्रधान, सरल तथा व्यावहारिक है। आपने वर्णनात्मक, भावात्मक, सूक्ति कथन, व्यंग्यात्मक आदि शैलियों को अपनाया है।

कृतियाँ-सरदार पूर्णसिंह द्वारा लिखे हुए कुल छ: निबंध मिलते हैं। इनके बल पर ही आप हिन्दी के निबंधकारों में महत्वपूर्ण स्थान के अधिकारी हैं। ये निबन्ध हैं-आचरण की सभ्यता, मजदूरी और प्रेम, सच्ची वीरता, पवित्रता, अमरीका का मस्ताना योगीवाल्ट विटमैन तथा कन्यादान।

मजदूरी और प्रेम पाठ-सारांश

प्रश्न- 'मजदूरी और प्रेम' निबन्ध का सारांश लिखिए।

उत्तर- परिचय-सरदार पूर्णसिंह द्वारा लिखित निबंधों में 'मजदूरी और प्रेम' का महत्वपूर्ण स्थान है। इसमें किसान तथा श्रमिकों को ईश्वर का सच्चा प्रतिनिधि बताया गया है तथा श्रम की महत्ता प्रतिपादित की गई है। हल चलाने वाले का जीवन-हल चलाने वाले तथा भेड़ चराने वाले स्वभाव से सज्जन होते हैं।

वे खेत की हवन शाला में अपने श्रम की आहुति दिया करते हैं। ब्रह्महुत से जगत पैदा हुआ है। किसान अन्न पैदा करने में ब्रह्मा के समान है। अन्न तथा फलों में उसका ही श्रम दिखाई देता है। वह साग-पात खाता है। ठंडे चस्मों तथा नदियों का पानी पीता है। वह पढ़ा-लिखा नहीं है।

जप-तप नहीं करता, खेती ही उसके ईश्वरीय प्रेम का केन्द्र है। वह पशु-पालन करता है। वह तथा उसका परिवार प्राकृतिक जीवन जीते हैं। उसकी आवश्यकताएँ सीमित हैं। लेखक को किसान के सरल जीवन में ईश्वर के दर्शन होते हैं।

गड़रिये का जीवन-एक बार लेखक ने एक बूढ़े गड़रिये को देखा। वह पेड़ के नीचे बैठा ऊन कात रहा था। उसकी भेड़े वहाँ चर रही थीं। उसके सिर के बाल सफेद थे किन्तु मुँह पर स्वास्थ्य की लालिमा थी। उसका कोई स्थायी घर नहीं था। जहाँ जाता था वहीं घास की झोंपड़ी बना लेता था। उसकी स्त्री रोटी पकाती थी। उसकी दो जवान कन्यायें थीं।

वे भेड़ चराते समय पिता के साथ रहती थीं। उन्होंने अपने माता-पिता के अतिरिक्त किसी को नहीं देखा था। गड़रिया पवित्र प्राकृतिक जीवन जीता था। उसकी युवा पुत्रियों की पवित्रता सूर्य, बर्फ और वन की सुगंध के समान थी। वे सभी अपनी भेड़ों की प्रेमपूर्वक देखभाल करते थे। किसी भेड़ के बीमार होने पर चिन्तित तथा उसकी सेवा में रत रहते थे।

स्वस्थ होने पर प्रसन्न होते थे। वे ईश्वर की वाणी को सुनते नहीं प्रत्यक्ष देखते थे। इससे उनको ब्रह्मानंद की प्राप्ति होती थी। लेखक को यह देखकर लगता है कि अनपढ़ लोग ही ईश्वर को साक्षात् देख पाते हैं-पंडितों के उपदेश निरर्थक हैं। पुस्तकों द्वारा प्रदत्त ज्ञान अपूर्ण है। गड़रिये के परिवार की प्रेम मजदूरी का मूल्य कोई नहीं चुका सकता है।

मजदूर की मजदूरी-दिन-भर श्रम करने वाले की मजदूरी कुछ पैसों में नहीं दी जा सकती। मजदूर के शरीर के सभी अंग ईश्वर ने बनाए हैं और पैसे जिस धातु से बने हैं, वह भी ईश्वर ने बनाई है।

अन्न, धन एवं जल भी ईश्वर की देन हैं। मजदूर की मजदूरी प्रेम-सेवा से ही दी जा सकती है। एक जिल्दसाज ने लेखक को एक किताब की जिल्द बनाई थी। वह उसका आमरण मित्र बन गया था। पुस्तक उठाते ही लेखक के मन में भरत-मिलाप का आनन्द आने लगता था।

एक अनाथ विधवा ने गाढ़े की कमीज रातभर जागकर सिली ! भूखी, दु:खी वह विधवा थककर रुक जाती फिर 'हे राम' कहकर सीने लगती है। इस कमीज में उसके सुख, दु:ख और पवित्रता मिली हुई है।

इस कमीज को पहनकर लेखक को तीर्थयात्रा का पुण्य मिलता है। यह उसके शरीर का नहीं आत्मा का वस्त्र है। ऐसा श्रम ईश्वर की प्रार्थना है। प्रार्थना शब्दों में नहीं होती। ऐसी प्रार्थना ईश्वर तत्काल सुनता है।

प्रेम-मजदूरी-मनुष्य के हाथों से हुए कार्यों में उसकी आत्मा की पवित्रता मिली होती है। राफेल के बनाए चित्रों में कला-कुशलता के साथ उसकी आत्मा दिखाई देती है। उनकी तुलना में कैमरे से खिंचे फोटो निर्जीव लगते हैं।

अपने हाथ से उगाये आलू में जो स्वाद आती है, वह डिब्बाबन्द चीजों में नहीं आता। जिन चीजों में मनुष्य के हाथ लगते हैं, उनमें उसकी पवित्रता तथा प्रेम मिल जाता है। प्रियतमा द्वारा बनाया रूखा-सूखा खाना होटल के भोजन से ज्यादा स्वादिष्ट होता है। उसके द्वारा लाए पानी में प्रेम का अमृत मिश्रण है।

उसकी इस प्रेम और त्याग भरी सेवा का बदला लेखक नहीं दे सकता। वह सुबह उठती है, आटो पीसती है. गाय का दूध निकालती है। मक्खन निकालती है, चूल्हे पर रोटी बनाती है। वह पूर्व दिशा की लालिमा से अधिक आनन्ददायिनी लगती है। वह रोटी नहीं अमूल्य पदार्थ है। ऐसा संयमपूर्ण प्रेम ही योग है।

मजदूरी और कला-श्रम आनन्द देने वाला होता है। उसको रुपयों से नहीं खरीदा जा सकता। श्रम करने वाले की पूजा ही ईश्वर की पूजा है। भगवान मंदिर-मस्जिद में नहीं मनुष्य की अनमोल आत्मा में मिलता है। मनुष्य और उसके श्रम का तिरस्कार नास्तिकता है।

बिना श्रम, बिना हाथ के कला-कौशल, विचार और चिन्तन बेकार है। दान के धन पर आराम से रहने से धर्म में अनाचार फैलता है। हाथ से काम करने वाला मजदूर ही सच्चा महात्मा और योगी है।

आरामतलबी से जीवन तथा चिन्तन में बासीपन आ गया है। मशीनी सभ्यता मनुष्य को नष्ट कर देगी। नई सभ्यता श्रमिकों के श्रम से ही फलेगी-फूलेगी।

मजदूरी और फकीरी-मजदूरी और फकीरी का संयोग मानवता के विकास के लिए आवश्यक है। बिना परिश्रम फकीरी भी बासी हो जाती है। प्रकृति में नित्य नवीनता है। उसकी उपेक्षा कर बिस्तर पर पड़े-पड़े, बिना हाथों से श्रम किए चिन्तन करना ठीक नहीं है।

साधु-संन्यासी श्रम करेंगे तभी उनकी बुद्धि निर्मल होगी। श्रम में एक नए ईश्वर के दर्शन होते हैं। श्रम ही ईश्वर का भजन है, मनुष्य को धातु से नहीं खरीदना चाहिए। प्रेम, सेवा और समानता के व्यवहार से उसकी

आत्मा को अपना बनाना चाहिए। सभी मनुष्य आपस में भाई-बहन हैं। वे एक ही पिता ईश्वर की संतान हैं। यह सारा संसार एक ही परिवार है। मजदूरी निष्काम कर्म है। उसमें स्वार्थ का अभाव है। मजदूरी और फकीरी अभिन्न हैं। जोन ऑफ आर्ट, टाल्सटाय, उमर खैयाम, खलीफा उमर, कबीर, रैदास, गुरु नानक, भगवाने श्रीकृष्ण आदि का जीवन श्रमपूर्ण चिन्तन का उदाहरण है।

→ महत्वपूर्ण गद्यांशों की संदर्भ सहित व्याख्याएँ

1. हल चलाने वाले और भेड़ चराने वाले प्रायः स्वभाव से ही साधु होते हैं। हल चलाने वाले अपने शरीर का हवन किया करते हैं। खेत उनकी हवनशाला है। उनके हवनकुण्ड की ज्वाला की किरणें चावल के लंबे और सफेद दानों के रूप में निकलती हैं।

गेहूँ के लाल-लाल दाने इस अग्नि की चिनगारियों की डालियाँ-सी हैं। मैं जब कभी अनार के फूल और फल देखता हूँ तब मुझे बाग के माली का रुधिर याद आ जाता है। उसकी मेहनत के कण जमीन में गिरकर उगे हैं और हवा तथा प्रकाश की सहायता से मीठे फलों के रूप में नजर आ रहे हैं।

किसान मुझे अन्न में, फूल में, फल में आहुति देता हुआ सा दिखाई पड़ता है। कहते हैं, ब्रह्माहुति से जगत् पैदा हुआ है। अन्न पैदा करने में किसान भी ब्रह्मा के समान है। खेती उसके ईश्वरी प्रेम का केंद्र है। उसका सारा जीवन पत्ते-पत्ते में, फूल-फूल में, फल-फल में बिखर रही है। (पृष्ठ सं. 49-50)

कठिन शब्दार्थ-साधु = सज्जन, सीधे-सादे। हवन = यज्ञ। ज्वाला = अग्नि। रुधिर = रक्त, खून। आहुति = हवन-सामग्री। ब्रह्माहुति = ब्रह्मा द्वारा यज्ञ की अग्नि में डाले गए पदार्थ जगत = संसार।

सन्दर्भ व प्रसंग-प्रस्तुत गद्यांश हमारी पाठ्यपुस्तक 'सृजन' में संकलित 'मजदूरी और प्रेम, शीर्षक निबन्ध से लिया गया है। इसके लेखक सरदार पूर्णसिंह हैं।

लेखक कहते हैं कि श्रमसाध्य जीवन पवित्र और श्रेष्ठ होता है। किसानों और मजदूरों के कार्य का मूल्य पैसों से नहीं आँका जा सकता। किसान अपने खेत में जो श्रम करता है वही उसकी ईश्वराधना है। अन्न और फल पैदा करने वाला किसान सृष्टि के रचयिता ब्रह्मा के समान है।

व्याख्या- सरदार पूर्ण सिंह श्रम के प्रशंसक हैं। वह कहते हैं कि खेत जोतने वाले किसान तथा भेड़ चराने वाले गड़रिये स्वभाव से ही सीधे-सादे और सज्जन होते हैं। किसानों के खेत उनकी यज्ञशाला हैं। उस यज्ञशाला में वह अपने शरीर का हवन करते हैं।

खेत में उपजे चावल के सफेद दाने यज्ञ कुंड से निकलने वाली अग्नि की लपटें हैं। गेहूँ के साफ दाने इस आग में उठने वाली चिनगारियों जैसे प्रतीत होते हैं। अनार के लाल फूलों और फलों को देखकर पता चलता है कि माली ने उनको पैदा करने में अपना खून बहाया है। किसान का श्रम ही खेत में अन्न के दानों के रूप में पैदा हुआ है। वही हवा और पानी पाकर मीठे फलों के रूप में दिखाई दे रहा है।

अन्न, फूल एवं फल सभी किसान द्वारा खेत की यज्ञशाला में दी गई आहुति का परिणाम हैं। लेखक को इन सब में किसान के दर्शन होते हैं। बताया जाता है कि ब्रह्मा ने यज्ञ किया था तो हवन कुंड में दी गई आहुति से इस संसार का जन्म हुआ था। किसान भी ब्रह्मा के समान है। वह खेती करके अन्न पैदा करता है। वह

ईश्वर के प्रति अपना प्रेम खेत में श्रम करके प्रकट करता है। प्रत्येक पत्ते, फल और फूल में किसान का जीवन समाया हुआ है।

विशेष-

(i) लेखक ने किसान की तुलना सृष्टिकर्ता ब्रह्मा से की है।
(ii) खेत में किया गया परिश्रम ही किसान द्वारा की गई ईश्वर की पूजा है।
(iii) भाषा तत्सम शब्द युक्त है। उसमें सादगी तथा सरलता है। वाक्य छोटे हैं।
(iv) शैली भावात्मक तथा चित्रात्मक है।

2. गुरु नानक ने ठीक कहा है-"भोले भाव मिलें रघुराई', भोले-भाले किसानों को ईश्वर अपने खुले दीदार का दर्शन देता है। उनकी फूस की छतों में से सूर्य और चंद्रमा छन-छनकर उनके बिस्तरों पर पड़ते हैं। ये प्रकृति के जवान साधु हैं। जब कभी मैं इन बे-मुकुट के गोपालों के दर्शन करता हूँ, मेरा सिर स्वयं ही झुक जाता है।

जब मुझे किसी फकीर के दर्शन होते हैं तब मुझे मालूम होता है कि नंगे सिर, नंगे पाँव, एक टोपी सिर पर, एक लँगोटी कमर में, एक काली कमली कंधे पर, एक लंबी लाठी हाथ में लिए हुए गौवों का मित्र, बैलों का हमजोली, पक्षियों का हमराज, महाराजाओं का अन्नदाता, बादशाहों को ताज पहनाने और सिंहासन पर बिठाने वाला, भूखों और नंगों को पालने वाला, समाज के पुष्पोद्यान का माली और खेतों का वाली जा रहा है। (पृष्ठसं. 50)

कठिन शब्दार्थ-बे मुकुट = बिना मुकुट वाले। गोपाल = ग्वाला। हमजोली = साथी। हमराज = मन की बातें जानने वाला। ताज = राज्य, सत्ता। पुष्पोद्यान = बगीची।

सन्दर्भ व प्रसंग-उपर्युक्त गद्यांश हमारी पाठ्यपुस्तक 'सृजन' में संकलित 'मजदूरी और प्रेम' शीर्षक निबंध से लिया गया है। इसके लेखक अध्यापक पूर्णसिंह हैं। लेखक किसानों की श्रमशीलता की प्रशंसा करता है। किसानों में दया, वीरता और प्रेम के गुण होते हैं। ये गुण अन्य लोगों में नहीं पाये जाते॥

व्याख्या- लेखक कहता है कि गुरु नानक देव का यह कथन ठीक ही है कि ईश्वर भोले-भाले भावुक लोगों को ही प्राप्त होता है। किसान स्वभाव से भोला होता है। ईश्वर उसको साक्षात् दर्शन देता है। किसान का जीवन सादा तथा प्राकृतिक है। उसकी घास-फूस से बनी झोंपड़ी से सूर्य और चन्द्रमा की किरणें निकलकर उसके बिस्तर पर गिरती हैं।

युवा होते हुए भी किसान स्वभाव से साधु जैसा होता है। वह गायों का पालन करने वाला है। किन्तु श्रीकृष्ण के समान उसके सिर पर मुकुट सुसज्जित नहीं है। लेखक का सिर उसको देखकर झुक जाता है। लेखक को किसान किसी फकीर के समान सरल प्रतीत होता है।

उसके सिर और पैर नंगे हैं। उसकी कमर में एक लँगोटी, सिर पर टोपी, कंधे पर काला कम्बल तथा हाथ में लम्बी लाठी है। वह गायों का दोस्त है, बैलों का साथी है, पक्षियों के मन की बातें जानने वाला है, वह राजा-महाराजाओं को भोजन देने वाला तथा सम्राटों को सत्ता प्रदान करने वाला है। वह भूखे-नंगे, गरीबों का पालन-पोषण करने वाला है। वह समाजरूपी फूलों के बगीचे का माली है तथा खेतों का स्वामी है।

विशेष-

(i) किसान का जीवन सरलता तथा परोपकार से भरा हुआ है।
(ii) वह गरीबों से लेकर राजा-महाराजाओं तक का पोषण करता है।
(iii) भाषा सरल और प्रवाहपूर्ण है। वाक्य छोटे हैं।
(iv) शैली सजीव, चित्रात्मक तथा भावात्मक है।

3. ऐसे ही मूक जीवन से मेरा भी कल्याण होगा। विद्या को भूल जाऊँ तो अच्छा है। मेरी पुस्तकें खो जायँ तो उत्तम है। ऐसा होने से कदाचित् इस वनवासी परिवार की तरह मेरे दिल के नेत्र खुल जायें और मैं ईश्वरीय झलक देख सकें।

चन्द्र और सूर्य की विस्तृत ज्योति में जो वेदगान हो रहा है उसे इस गड़रिये की कन्याओं की तरह मैं सुन तो न सकें, परंतु कदाचित् प्रत्यक्ष देख सकें। कहते हैं, ऋषियों ने भी इनको देखा ही था, सुना न था। पंडितों की ऊटपटाँग बातों से मेरा जी उकता गया है।

प्रकृति की मंद-मंद हँसी में ये अनपढ़ लोग ईश्वर के हँसते हुए ओंठ देख रहे हैं। पशुओं के अज्ञान में गंभीर ज्ञान छिपा हुआ है। इन लोगों के जीवन में अद्‌भुत आत्मानुभव भरा हुआ है। गड़रिये के परिवार की प्रेम-मजदूरी का मूल्य कौन दे सकता है। (पृष्ठ सं. 51)

कठिन शब्दार्थ-मूक = गूंगा, नि:शब्द, शांत। कल्याण = भला। कदाचित् = संभवतः। दिल के नेत्र = दिव्यज्ञान। वेदज्ञान = वेद = मंत्रों का पाठ। ऊटपटांग = उल्टी-सीधी। जी उकताना = मन ऊबना। अद्‌भुत = विचित्र। आत्मानुभव = आत्मज्ञान।

सन्दर्भ एवं प्रसंग-प्रस्तुत गद्यांश हमारी पाठ्यपुस्तक 'सृजन' में संकलित 'मजदूरी और प्रेम' शीर्षक निबन्ध से उधृत है। इसके लेखक अध्यापक पूर्ण सिंह हैं।

लेखक ने एक गड़रिये को देखा। उसके सरल और श्रमपूर्ण जीवन से वह बहुत प्रभावित हुआ। उसने अपने भाई से कहा कि वह भी भेड़े चराने वाले गड़रिये के समान जीवन व्यतीत करना चाहता है। ऐसे शांत, पवित्र और प्रेम भरे जीवन में ही सच्चा आनन्द है।

व्याख्या- लेखक कहता है कि भेड़ पालने वाले गड़रिये का जीवन पवित्र और स्पष्ट है। इस प्रकार का नि:शब्द, शांत जीवन जीकर वह भी अपना कल्याण करना चाहता है। उसे लगता है कि ज्ञान सरल प्राकृतिक जीवन जीने में बाधक होता है।

वह विद्या को भूलना चाहता है। उसकी पुस्तकें खो जाये तो अच्छा है। ऐसा होने पर संभवत: वन में रहने वाले उस गड़रिया-परिवार की तरह उसके मन की आँखें खुल जायें और उसको ईश्वर के दर्शन हो सकें। सूर्य और चन्द्रमा का जो प्रकाश चारों ओर फैला है, उसमें वेदमंत्रों की गूंज व्याप्त है।

उसको गड़रिये की लड़कियों की तरह वह भी सुन सकेगा। सुन नहीं प्रत्यक्ष देख सकेगा। वैदिक ऋषियों ने भी वेद के मंत्रों को सुना नहीं, देखा ही था। विद्वानों के उपदेश निरर्थक और व्यर्थ हैं। उनसे लेखक का मन ऊब गया है। उन उपदेशों को सुनकर आध्यात्मिक सुख नहीं मिलता। आनन्दपूर्ण प्राकृतिक जीवन जीने

वाले ये बिना पढ़े-लिखे लोग ईश्वर के हँसते हुए स्वरूप का साक्षात् दर्शन कर रहे हैं। पशु अज्ञानी होते हैं। किन्तु उनको आध्यात्मिकता का गहरा ज्ञान होता है।

वन का स्वाभाविक जीवन जीने वालों को जीवन का विचित्र आत्मिक अनुभव प्राप्त है। गड़रिये के परिवार का प्रेम और श्रमशीलता अमूल्य है। उसकी कीमत नहीं चुकाई जा सकती॥

विशेष-

(i) प्राकृतिक, श्रमपूर्ण, निश्छल, प्रेम भरा जीवन आनन्ददायक होता है। ऐसे लोगों को ईश्वर का दर्शन सरलता से प्राप्त होता है।
(ii) ज्ञान आत्मिक प्रसन्नता और सरलता में बाधक होता है।
(iii) भाषा सरल तथा प्रवाहपूर्ण है।
(iv) शैली भावात्मक है।

4. इसे माता और इस बहन की सिली हुई कमीज मेरे लिए मेरे शरीर का नहीं-मेरी आत्मा का वस्त्र है। इसका पहनना मेरी तीर्थ-यात्रा है। इस कमीज में उस विधवा के सुख-दुःख, प्रेम और पवित्रता के मिश्रण से मिली हुई जीवनरूपिणी गंगा की बाढ़ चली जा रही है।

ऐसी मजदूरी और ऐसा काम-प्रार्थना, सन्ध्या और नमाज से क्या कम है? शब्दों से तो प्रार्थना हुआ नहीं करती। ईश्वर तो कुछ ऐसी ही मूक प्रार्थनाएँ सुनता है और तत्काल सुनता है। (पृष्ठ सं. 52)

कठिन शब्दार्थ-तीर्थयात्रा = धार्मिक स्थान की यात्रा। मिश्रण = मेल। सन्ध्या = पूजा। मूक = शब्दहीन। तत्काल = तुरन्त।

सन्दर्भ एवं प्रसंग-प्रस्तुत गद्यांश हमारी पाठ्यपुस्तक 'सृजन' में संकलित 'मजदूरी और प्रेम' शीर्षक पाठ से उधृत है। इसके लेखक सरदार पूर्ण सिंह हैं।

सरदार पूर्ण सिंह कहते हैं कि किसी मजदूर को उसके काम की मजदूरी पैसे के रूप में नहीं दी जा सकती। उसका श्रम अमूल्य होता है। उसकी मूल्य प्रेम और सेवाभाव से ही चुकाया जा सकता है। एक निर्धन विधवा ने भूखी-प्यासी रहकर, रातभर जाग कर लेखक के लिए कमीज सिली है। लेखक को उसकी यह अमूल्य भेंट है॥

व्याख्या- लेखक कहता है कि इस माता अथवा बहन ने जो कमीज सिली है, वह उसके लिए उसकी अनुपम भेंट है। यह कमीज उसके शरीर का वस्त्र नहीं है। यह उसकी आत्मा का वस्त्र है। इस कमीज को पहनने से उसको पवित्र तीर्थस्थान की यात्रा करने जैसा आनन्द प्राप्त होता है।

इससे उसका शरीर ही नहीं आत्मा भी ढक जाती है। इस कमीज में जीवनरूपी गंगा की बाढ़ बह रही है, जिसमें इसको सिलने वाली विधवा के सुख-दुःख, प्रेम और पवित्रता आदि के भाव मिले हुए हैं। ऐसी मजदूरी और ऐसा काम ईश्वर की प्रार्थना, सन्ध्या तथा नमाज के समान ही पवित्र और उत्तम है।

सच्ची प्रार्थना शब्दों का प्रयोग करने से नहीं होती। सच्ची प्रार्थना शब्दरहित होती है। ईश्वर हृदय से निकली सच्ची नि:शब्द प्रार्थना तुरन्त सुन लेता है।

विशेष-

(i) लेखक मानता है कि सच्ची प्रार्थना सीधी हृदय से निकलती है। उसके लिए शब्दों की आवश्यकता नहीं होती।

(ii) सच्ची प्रार्थना को ईश्वर तुरन्त सुनता है तथा उसका फल शीघ्र ही प्राप्त होता है।

(iii) भाषा बोधगम्य तथा विषयानुकूल है।

(iv) शैली भावात्मक है। सूक्ति कथन शैली भी है, जैसे-इसको पहनना मेरी तीर्थयात्रा है।

5. हाथ की मेहनत से चीज में जो रस भर जाता है वह भला लोहे के द्वारा बनाई हुई चीज में कहाँ। जिस आलू को मैं स्वयं बोता हूँ, मैं स्वयं पानी देता हूँ, जिसके इर्द-गिर्द की घास-पात खोदकर मैं साफ करता हूँ उस आलू में जो रस मुझे आता है वह टीन में बंद किए हुए अचार मुरब्बे में नहीं आता।

मेरा विश्वास है कि जिस चीज में मनुष्य के प्यारे हाथ लगते हैं, उसमें उसके हृदय का प्रेम और मन की पवित्रता सूक्ष्म रूप से मिल जाती है और उसमें मुर्दे को जिंदा करने की शक्ति आ जाती है। (पृष्ठ सं. 52)

कठिन शब्दार्थ-रस = स्वाद, आनन्द। लोहा = मशीन। इर्द-गिर्द = आसपास। टीन = डिब्बा। सूक्ष्म = छोटा। मुर्दा = निर्जीव

सन्दर्भ एवं प्रसंग-प्रस्तुत गद्यांश हमारी पाठ्यपुस्तक 'सृजन' में संकलित 'मजदूरी और प्रेम' शीर्षक पाठ से लिया गया है। इसके लेखक सरदार पूर्ण सिंह हैं।

लेखक कहता है कि श्रम आनन्द देने वाला होता है। मनुष्य के हाथ से बनी चीजों में उसकी पवित्र आत्मा समा जाती है। हाथ से बनी तथा मशीन से बनी चीजों में वही अन्तर है जो बस्ती और श्मशान में होता है।

व्याख्या-लेखक कहता है कि हाथ से बनी चीजें अत्यन्त आकर्षक होती हैं, उनमें जो सौंदर्य और आनंद भरा होता है, वह लोहे की मशीनों द्वारा बनी हुई चीजों में नहीं होता है।

लेखक ने खेत में आलू बोया है। वह उसमें स्वयं पानी देता है तथा उसके आस-पास उग आई जंगली घास और पौधों की निराई-गुड़ाई करता है। उस आलू का स्वाद उसे अच्छा लगता है।

बाजार में जो खाने की डिब्बाबंद चीजें मिलती हैं, उनमें वैसा मधुर स्वाद नहीं होता। लेखक मानता है कि मनुष्य के हाथ की मेहनत से बनी हुई चीजों में उसके मन की पवित्रता तथा प्रेम समाहित हो जाते हैं। इससे उनका आकर्षण दुगुना हो जाता है। उनमें निर्जीव प्राणी में भी जीवन उत्पन्न करने की शक्ति आ जाती है।

विशेष-

(i) मशीनों द्वारा बनी चीजें उतनी अच्छी नहीं लगतीं जितनी हाथों द्वारा बनाई गई चीजें।

(ii) हस्त निर्मित वस्तुओं में उनको बनाने वाले का प्रेम तथा पवित्रता का भाव मिलकर उनको आकर्षक बना देता है।

(iii) भाषा सरल और प्रवाहपूर्ण है। शब्द चयन उत्तम है।

(iv) शैली चित्रात्मक तथा भावात्मक है।

6. होटल में बने हुए भोजन यहाँ नीरस होते हैं क्योंकि वहाँ मनुष्य मशीन बना दिया जाता है; परन्तु अपनी प्रियतमा के हाथ से बने हुए रूखे-सूखे भोजन में कितना रस होता है।

जिस मिट्टी के घड़े को कंधों पर उठाकर, मीलों दूर से उसमें मेरी प्रेममग्न प्रियतमा ठंडा जल भर लाती है, उस लाल घड़े का जल जब मैं पीता हूँ तब जल क्या पीता हूँ, अपनी प्रेयसी के प्रेमामृत को पान करता हूँ।

जो ऐसा प्रेमप्याला पीता हो उसके लिए शराब क्या वस्तु है? प्रेम से जीवन सदा गदगद रहता है। मैं अपनी प्रेयसी की ऐसी प्रेम-भरी, रस-भरी, दिल-भरी सेवा का बदला क्या कभी दे सकता हूँ? (पृष्ठ सं. 52-53)

कठिन शब्दार्थ- नीरस = बेस्वाद। मशीन = निर्जीव यंत्र। रस = स्वाद। प्रियतमा = सबसे अधिक प्रिय स्त्री, पत्नी। प्रेयसी = प्रिया। प्रेमामृत = प्रेम का अमृत, अमृत जैसा मधुर प्रेम। पान करना = पीना। गदगद = आनन्दित। रसभरी = आनन्ददायिनी। दिलभरी = मन को प्रसन्नता देनेवाली।

सन्दर्भ एवं प्रसंग-प्रस्तुत गद्यांश हमारी पाठ्यपुस्तक 'सृजन' में संकलित 'मजदूरी और प्रेम' शीर्षक निबन्ध से उधृत है। इसके लेखक मरदार पूर्ण सिंह हैं।

लेखक कहता है कि हाथ से किए गए काम में कर्ता का प्रेम तथा पवित्रता मिलकर उसको रोचक बना देते हैं। होटल में बने भोजन की तुलना में घर में बना भोजन अधिक स्वादिष्ट होता है।

व्याख्या- लेखक कहता है कि होटल में जो खाना मिलता है, उसमें वह स्वाद नहीं होता जो घर के बने भोजन में होता है। होटल में काम करने वाला आदमी निर्जीव मशीन की तरह काम करता है। उसमें मनुष्य के मन का प्रेम तथा सरसता नहीं होती।

किन्तु जब लेखक की प्यारी पत्नी घर में भोजन बनाती है तो वह रूखा-सूखा होने पर भी अत्यन्त स्वादिष्ट लगता है। वह मीलों दूर स्थित कुएँ या नदी से घड़े में पानी भरकर, प्रेमपूर्वक उसको अपने कंधे पर उठा कर लाती है। उस पानी में उसके हृदय का प्रेम मिल जाता है।

लाल घड़े के उस पानी को पीने से लेखक को अपनी प्रिया के अमृत के समान मीठे प्रेम का आनन्द प्राप्त होता है। वह साधारण पानी नहीं उसके प्रेम का मधुर अमृत होता है। प्रेयसी के प्रेम से भरे उस जल के प्याले की मादकता शराब से भी ज्यादा होती है। प्रेम जीवन को आनन्द से भर देता है। लेखक की प्रियतमा

उसको अन्न-जल देकर जो सेवा करती है, उसमें उसके मन का प्रेम, सरसता तथा समर्पण भरा होता है। होटल के बने भोजन का मूल्य चुकाया जा सकता है किन्तु प्रेयसी की प्रेम भरी सेवा अमूल्य होती है।

विशेष-

(i) होटल का बना भोजन मशीनी और बेस्वाद तथा घर में बना भोजन स्वादिष्ट होता है।
(ii) घर में पत्नी द्वारा बनाए गए भोजन तथा लाये गए जल में उसका सरस प्रेम मिलकर उसको अत्यंत स्वादिष्ट बना देता है।
(iii) भाषा सरस, सरल तथा विषयानुरूप है।
(iv) शैली सजीव, चित्रात्मक तथा भावात्मक है।

7. मेरी प्रिया अपने हाथ से चुनी हुई लकड़ियों को अपने दिल से चुराई हुई एक चिनगारी से लाल अग्नि में बदल देती है। जब वह आटे को छलनी से छानती है तब मुझे उसकी छलनी के नीचे एक अद्‌भुत ज्योति की लौ नजर आती है।

जब वह उस अग्नि के ऊपर मेरे लिए रोटी बनाती है तब उसके चूल्हे के भीतर मुझे तो पूर्व दिशा की नभोलालिमा से भी अधिक आनन्ददायिनी लालिमा देख पड़ती है। यह रोटी नहीं, कोई अमूल्य पदार्थ है। मेरे गुरु ने इसी प्रेम से संयम करने का नाम योग रखा है। मेरा यही योग है। (पृष्ठ सं. 53)

कठिन शब्दार्थ-चिनगारी = अग्निकण। ज्योति = प्रकाश। लौ = लपटे। नभो = लालिमा = (आकाश में छाया लाल रंग) संयम = नियंत्रण।

सन्दर्भ एवं प्रसंग- प्रस्तुत गद्यांश हमारी पाठ्यपुस्तक 'सृजन' में संकलित 'मजदूरी और प्रेम' शीर्षक से लिया गया है। इसके लेखक सरदार पूर्ण सिंह हैं।

लेखक अपनी प्रेयसी की निस्वार्थ सेवा, प्रेम-साधना का वर्णन कर रहा है। वह प्रात:काल होते ही गृहकार्यों में लग जाती है। श्रम में प्रेमभाव के साथ लीन वह प्रात:कालीन शोभा के समान आनन्ददायिनी प्रतीत होती है।

व्याख्या- लेखक कहता है कि उसकी प्रियतमा जंगल से स्वयं लकड़ी एकत्र कर लाती है। जब वह उनको चूल्हे में रखकर जलाती है तो ऐसी लगती है जैसे उसके मन के भीतर छिपी किसी चिनगारी ने उन लकड़ियों में आग पैदा कर दी हो।

फिर वह छलनी लेकर आटे को छानती है। छलनी के नीचे गिरते आटे में लेखक को एक विचित्र प्रकाश के दर्शन होते हैं। उसके बाद वह चूल्हे की आग में लेखक के लिए रोटियाँ सेकती हैं। उस समय लेखक को उसके मुख परे जो लाली दिखाई देती है, वह पूर्व दिशा में सवेरे उत्पन्न हुई आकाश की लाली से भी अधिक आनन्दप्रद प्रतीत होती है।

उसकी बनाई रोटी कोई सामान्य रोटी नहीं है। वह एक ऐसी वस्तु है जिसका मूल्य नहीं आँका जा सकता। लेखक के प्रति उसकी प्रेयसी के इस अनुपम प्रेम को ही लेखक के गुरु ने योग का नाम दिया है। लेखक इसी योग-साधना में तल्लीन रहता है।

विशेष-

(i) लेखक का अपनी प्रेयसी के साथ जो संयमपूर्ण प्रेम है, उसको ही वह योग मानता है।
(ii) संयम, प्रेम, श्रम के समन्वय के कारण लेखक को प्रेमिका का स्वरूप प्रातः कालीन सुषमा के समान आनन्दप्रद प्रतीत होता है।
(iii) भाषा सरल, सरस तथा सजीव है।
(iv) शैली में चित्रात्मकता है तथा वह भावात्मक है।

8. आदमियों की तिजारत करना मूर्खा का काम है। सोने और लोहे के बदले मनुष्य को बेचना मना है। आजकल भाप की कलों का दाम तो हजारों रुपया है; परंतु मनुष्य कौड़ी के सौ-सौ बिकते हैं। सोने और चाँदी की प्राप्ति से जीवन का आनंद नहीं मिल सकता।

सच्चा आनंद तो मुझे मेरे काम से मिलता है। मुझे अपना काम मिल जाय तो फिर स्वर्गप्राप्ति की इच्छा नहीं, मनुष्य-पूजा ही सच्ची ईश्वर-पूजा है। मंदिर और गिरजे में क्या रखा है? ईंट, पत्थर, चूना कुछ ही कहो-आज से हम अपने ईश्वर की तलाश मंदिर, मस्जिद, गिरजा और पोथी में न करेंगे।

अब तो यही इरादा है कि मनुष्य की अनमोल आत्मा में ईश्वर के दर्शन करेंगे। यही आर्ट है-यही धर्म है। मनुष्य और मनुष्य की मजदूरी का तिरस्कार करना नास्तिकता है। (पृष्ठ सं. 53)

कठिन शब्दार्थ-तिजारत = व्यापार, खरीदना-बेचना। कल = मशीन। कौड़ी के सौ-सौ बिकना = कीमती न होना, सस्ता होना। तलाश = खोज। गिरजा = ईसाई धर्म का पूजास्थल। पोथी = धार्मिक पुस्तक। इरादा = विचार। अनमोल = अमूल्य। आर्ट = कला। तिरस्कार = अपमान। नास्तिकता = निरीश्वरवाद।

सन्दर्भ एवं प्रसंग-प्रस्तुत गद्यांश हमारी पाठ्यपुस्तक 'सृजन' में संकलित 'मजदूरी और प्रेम' पाठ से उद्धृत है। इसके लेखक सरदार पूर्ण सिंह हैं। अध्यापक पूर्ण सिंह श्रमपूर्ण जीवन को ही सफल मानते हैं। श्रम को खरीदा नहीं जा सकता। उसको मूल्य प्रेम द्वारा ही अदा किया जा सकता है। अपने काम में लीन रहना तथा श्रमपूर्ण जीवन बिताना ही ईश्वर की पूजा है।

व्याख्या- लेखक कहता है कि मनुष्य के श्रम को खरीदना और बेचना बुद्धिमानों को काम नहीं है। धातु निर्मित सिक्कों में मनुष्य के परिश्रम की कीमत नहीं दी जा सकती। आजकल श्रमिक के श्रम को बहुत सस्ता कर दिया गया है।

भाप से चलने वाली मशीनों की कीमत तो हजारों रुपये होती है। किन्तु मनुष्य मारे-मारे फिरते हैं। उनको कोई पूछता ही नहीं। सोना-चाँदी अर्थात् धन एकत्र करने की होड़ लगी है। किन्तु धन से मनुष्य को सच्चा सुख नहीं मिल सकता। जीवन का सच्चा सुख तो काम करने से मिलता है। लेखक को अपना काम मिल जाये तो उसको स्वर्ग को पाने की इच्छा भी नहीं होगी।

उसको अपने काम से ही बड़ी-से-बड़ी खुशी प्राप्त होती है। मनुष्य की पूजा ही ईश्वर की सच्ची पूजा होती है। मंदिरों और गिरजाघरों में ईश्वर नहीं रहता। वहाँ ईंट, पत्थर और चूने के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है।

ईश्वर तो वहाँ है ही नहीं। मंदिरों, मस्जिदों, गिरजाघरों और धार्मिक पुस्तकों में ईश्वर को तलाश करना बेकार

है। इनके सहारे ईश्वर को नहीं पाया जा सकता। मनुष्य की अमूल्य आत्मा में ही ईश्वर रहता है। ईश्वर के दर्शन के लिए मनुष्य की आत्मा में झाँकने की जरूरत है। इसी को कला और धर्म कहते हैं। मनुष्य और उसके श्रम की उपेक्षा को ही निरीश्वरवाद कहते हैं।

विशेष-

(i) मानव पूजा ही सच्ची ईश्वरपूजा है। मनुष्य और उसके श्रम की उपेक्षा नास्तिकता है।
(ii) श्रमिक का श्रम अमूल्य है। उसको सोने-चाँदी के बदले नहीं खरीदा जा सकता।
(iii) भाषा सरल है तथा उसमें अद्‌भुत प्रवाह है।
(iv) शैली भावात्मक है।

9. निकम्मे रहकर मनुष्यों की चिन्तन-शक्ति थक गई है। बिस्तरों और आसनों पर सोते और बैठे-बैठे मन के घोड़े हार गए हैं। सारा जीवन निचुड़ चुका है। स्वप्न पुराने हो चुके हैं। आजकल की कविता में नयापन नहीं। उसमें पुराने जमाने की कविता की पुनरावृत्ति मात्र है।

इस नकल में असल की पवित्रता और कुंवारेपन का अभाव है। अब तो एक नए प्रकार का कला-कौशलपूर्ण संगीत-साहित्य संसार में प्रचलित होने वाला है। यदि वह न प्रचलित हुआ तो मशीनों के पहियों के नीचे दबाकर हमें मरा समझिए। (पृष्ठ सं. 53-54)

कठिन शब्दार्थ-निकम्मा = शरीर से श्रम न करने वाला। चिन्तन = विचार। मन के घोड़े हारना = विचार करने की शक्ति नष्ट होना। निचुड़ना = तत्वहीन, नीरस। पुनरावृत्ति = दोहराना। कुँआरापन = मौलिकता।

सन्दर्भ एवं प्रसंग-प्रस्तुत गद्यांश हमारी पाठ्यपुस्तक 'सृजन' में संकलित 'मजदूरी और प्रेम' शीर्षक निबंध से उद्‌धृत है। इसके लेखक सरदार पूर्ण सिंह हैं।

लेखक की मान्यता है कि शारीरिक श्रम के अभाव में मानसिक चिन्तन अपूर्ण है। जो बैठा-बैठा सोचता रहता है और हाथ-पैर नहीं हिलाता, उसका जीवन भ्रष्ट हो जाता है। ईश्वर पद्मासन से नहीं पसीना बहाने से प्राप्त होता है। लुहार, बढ़ई, किसान ये सभी कवि, महात्मा तथा योगी के समान ही श्रेष्ठ तथा महान होते हैं।

व्याख्या-लेखक कहता है कि जो लोग शारीरिक परिश्रम नहीं करते, उनकी सोचने-विचारने की शक्ति बेकार हो जाती है। जिनका जीवन बिस्तरों पर लेटे-लेटे तथा आसनों पर बैठे-बैठे ही व्यतीत होता है, अपने मन की सोचने-विचारने की शक्ति थक जाती है, उनका जीवन तत्वहीन तथा नीरस हो जाता है।

उनकी भविष्य के प्रति कल्पना में नयापन नहीं रह जाता। आज ऐसा ही हो रहा है। कविता में नवीनता नहीं बची है। वह पुराने समय की कविता का दोहराया स्वरूप है। वह नकली है। उसमें कविता का असलीपन तथा मौलिकता नहीं है। अब एक नए तरीके का संगीत और साहित्य संसार में पैदा होने वाला है।

उस संगीत और साहित्य में हस्तकला और कौशल भी मिला हुआ होगा। उससे ही मानवता को नया जीवन मिलेगा। यदि इस प्रकार का साहित्य और संगीत उत्पन्न नहीं होगा तो मनुष्य मशीनी सभ्यता के नीचे दब जायेगा तथा उसकी मौलिकता नष्ट हो जायेगी और उसकी मृत्यु हो जायेगी॥

विशेष-

(i) लेखक का मानना है कि साहित्य, संगीत और चिन्तन तभी बचेगा जब मनुष्य श्रम की महत्ता को स्वीकार करेगा तथा स्वयं भी शारीरिक श्रम करेगा।

(ii) कोरे मानसिक चिन्तन से मनुष्यता का कुछ भी भला नहीं हो सकता।

(iii) भाषा सरल तथा सरस है। छोटे-छोटे वाक्यों के कारण उसमें सजीवता उत्पन्न हो गई है।

(iv) शैली भावात्मक तथा चित्रात्मक है॥

10. यह नया साहित्य मजदूरों के हृदय से निकलेगा। उन मजदूरों के कंठ से यह नई कविता निकलेगी जो अपना जीवन आनंद के साथ खेत की मेड़ों का, कपड़े के तागों का, जूते के टॉकों का, लकड़ी की रगों का, पत्थर की नसों का भेदभाव दूर करेंगे।

हाथ में कुल्हाड़ी, सिर पर टोकरी, नंगे सिर और नंगे पाँव, धूल से लिपटे और कीचड़ से रँगे हुए ये बेजबान कवि जब जंगल में लकड़ी काटेंगे तब लकड़ी काटने का शब्द इनके असभ्य स्वरों से मिश्रित होकर वायुयान पर चढ़ दसों दिशाओं में ऐसा अद्‌भुत गान करेगा कि भविष्य के कलावन्तों के लिए वही ध्रुपद और मल्हार का काम देगा।

चरखा कातने वाली स्त्रियों के गीत संसार के सभी देशों के कौमी गीत होंगे। मजदूरों की मजदूरी ही यथार्थ पूजा होगी। कलारूपी धर्म की तभी वृद्धि होगी। तभी नए कवि पैदा होंगे, तभी नए औलियों का उद्भव होगा। परंतु ये सब के सब मजदूरी के दूध से पलेंगे। धर्म, योग, शुद्धाचरण, सभ्यता और कविता आदि के फूल इन्हीं मजदूर-ऋषियों के उद्यान में प्रफुल्लित होंगे। (पृष्ठ सं. 54)

कठिन शब्दार्थ-कंठ = गला। मेंड़ = खेत की सीमा पर बनी मिट्टी की दीवार। बेजबान = मूक। असभ्य = प्राकृतिक। मिश्रित = मिला हुआ। दस दिशायें = पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण, अग्निकोण, नैर्ऋतकोण, वायुकोण, ईशानकोण, ऊर्ध्व, अधः। कलावंत = कलाकार, संगीतकार। ध्रुपद और मल्हार = संगीत के दो राग। कौमी = जातीय, राष्ट्रीय। औलिया = धार्मिक पुरुष। उद्भव = जन्म। प्रफुल्लित = खिलना॥

सन्दर्भ एवं प्रसंग- प्रस्तुत गद्यांश हमारी पाठ्यपुस्तक 'सृजन' में संकलित 'मजदूरी और प्रेम' नामक निबंध से उद्‌धृत है। इसके लेखक सरदार पूर्ण सिंह हैं। लेखक कहते हैं कि भविष्य में एक नए प्रकार का साहित्य तथा नई तरह की कविता उत्पन्न होगी। इसमें श्रम और चिन्तन का समन्वय होगा। इसके अभाव में मानवता के लिए अस्तित्व का संकट पैदा होना अवश्यम्भावी है।

व्याख्या- लेखक कहता है कि भविष्य में जो नया साहित्य सृजित होगा वह मजदूरों के हृदय से निकलेगा। नई कविता का जन्म मजदूरों के कंठ से होगा। ये नए साहित्यकार तथा कवि प्रेम एवं लगन के साथ खेतों में काम करेंगे। वे कपड़े के कारखानों में तथा जूते की फैक्टरियों में काम करेंगे।

वे बढ़ई तथा संतराश बनकर परिश्रम करेंगे। उनके हाथ में कुल्हाड़ी तथा सिर पर टोकरी होगी। उनके पैरों में जूते नहीं होंगे। उन पर धूल-मिट्टी लिपटी होगी। उनके सिर पर टोपी नहीं होगी। उनके हाथ-पैर कीचड़

में सने होंगे। भविष्य के ये मूक कवि जंगल में लकड़ी काटेंगे। लकड़ी काटने की आवाज़ उनके प्राकृतिक स्वरों के साथ मिलकर वायुयान में चढ़कर सभी दसों दिशाओं में गूंजेगी। उनका यह विचित्र गान भावी संगीतकारों के लिए ध्रुपद तथा मल्हार सिद्ध होगा।

चरखा कातने वाली स्त्रियाँ जो गीत गायेंगी, वे राष्ट्रीय गीत बनेंगे। जब मजदूरों के श्रम की वास्तविक पूजा होगी, तभी कलारूपी धर्म की वृद्धि होगी। तभी नए कवि तथा सच्चे धर्मोपदेश पैदा होंगे। इन सबका पालन-पोषण मजदूरी के दूध से होगा। ये मजदूर ऋषियों के समान होंगे। उनके बगीचे से धर्म, योग, पवित्र आचरण, सभ्यता और कवितारूपी फूल खिलेंगे।

विशेष-

(i) लेखक का मानना है कि भावी कवि और साहित्यकार शारीरिक श्रम के बिना नवीन साहित्य की रचना नहीं कर सकेंगे।

(ii) शारीरिक श्रम करके ही विचारों की श्रेष्ठता प्राप्त हो सकेगी।

(iii) भाषा सरल तथा विषयानुकूल है।

(iv) शैली भावात्मक है।

11. मजदूरी तो मनुष्य के समष्टि-रूप का व्यष्टि-रूप परिणाम है, आत्मारूपी धातु के गढ़े हुए सिक्के का नकदी बयाना है, जो मनुष्यों की आत्माओं को खरीदने के वास्ते दिया जाता है। सच्ची मित्रता ही तो सेवा है। उससे मनुष्यों के हृदय पर सच्चा राज्य हो सकता है।

जाति-पाँति, रूप-रंग और नाम-धाम तथा बाप-दादे का नाम पूछे बिना ही अपने-आपको किसी के हवाले कर देना प्रेम-धर्म का तत्व है। जिस समाज में इस तरह के प्रेम-धर्म का राज्य होता है उसको हर कोई हर किसी को बिना उसका नाम-धाम पूछे ही पहचानता है; क्योंकि पूछने वाले का कुल और उसकी जात वहाँ वही होती है जो उसकी, जिससे कि वह मिलता है।

वहाँ सब लोग एक ही माता-पिता से पैदा हुए भाई-बहन हैं। अपने ही भाई-बहनों के माता-पिता का नाम पूछना क्या पागलपन से कम समझा जा सकता है? यह सारा संसार एक कुटुम्बवत् है। (पृष्ठ सं. 55)

कठिन शब्दार्थ-समष्टि = समाज, समूह। व्यष्टि = व्यक्ति। बयाना = अग्रिम धन। वास्ते = लिए। हवाले करना = अर्पित करना। नामधाम = पता, नाम और स्थान। कुटुम्बवत् = परिवार जैसा
सन्दर्भ एवं प्रसंग-प्रस्तुत गद्यांश हमारी पाठ्यपुस्तक 'सृजन' में संकलित 'मजदूरी और प्रेम' शीर्षक पाठ से लिया गया है।

इसके लेखक सरदार पूर्ण सिंह हैं। लेखक कहता है कि श्रमिकों की तरह जीवन व्यतीत करने से ही ईश्वर का भजन हो सकता है। अपने श्रम को मानव जाति के हितार्थ अर्पित करने से ही सामाजिक एकता का भाव पैदा हो सकता है।

व्याख्या-लेखक कहता है कि मनुष्य के सामूहिक तथा सामाजिक स्वरूप का व्यक्ति रूप परिणाम मजदूरी है। जिस प्रकार किसी कार्य को करने वाले को कुछ अग्रिम धन दिया जाता है, उसी तरह मजदूरी आत्मारूपी धातु से बनाए गए सिक्कों के रूप में मनुष्य की आत्मा को खरीदने के लिए दिया जाने वाला धन है। लोगों की सेवा का सच्चा स्वरूप मित्रता ही हो सकती है।

मित्रता से ही मनुष्यों के मन पर अधिकार करके उनको अपना बनाया जा सकता है। जब हम किसी व्यक्ति से उसका नाम, जाति, पिता आदि का नाम नहीं पूछते; उसके रूप-रंग आदि के बारे में भी नहीं पूछते और स्वयं को उसकी सेवा हेतु समर्पित कर देते हैं, तो इसको ही प्रेम कहते हैं।

जिस समाज में प्रेम की भावना की प्रधानता होती है उसका प्रत्येक सदस्य एक-दूसरे को बिना उसका परिचय पूछे ही जानता-पहचानता है। पूछने वाला तथा जिससे पूछताछ की जा रही है, दोनों एक ही जाति, समाज अर्थात् मानव जाति से सम्बन्धित होते हैं।

वे सब एक ही माता-पिता की संतान होने के कारण आपस में भाई-बहन होते हैं। अपने भाई-बहनों से माता-पिता का नाम पूछना पागलपन ही माना जायगा। वास्तव में यह पूरा संसार एक कुटुम्ब के समान है।

विशेष-

(i) लेखक का मानना है कि संसार के सभी मनुष्य एक ही ईश्वर की संतान होने के नाते भाई-बहन हैं।
(ii) सच्ची मित्रता तथा समर्पण भाव से ही ईश्वर का अपनत्व पाया जा सकता है।
(iii) भाषा सरल तथा प्रवाहपूर्ण है।
(iv) शैली विचारात्मक तथा भावात्मक है।

12. मजदूरी करना जीवनयात्रा का आध्यात्मिक नियम है। जोन ऑफ आर्क (joan of Arc) की फकीरी और भेड़े चराना, टाल्सटाय का त्याग और जूते गाँठना, उमर खैयाम का प्रसन्नतापूर्वक तंबू सीते फिरना, खलीफा उमर का अपने रंग महलों में चटाई आदि बुनना, ब्रह्मज्ञानी कबीर और रैदास का शूद्र होना, गुरु नानक और भगवान श्रीकृष्ण का मूक पशुओं को लाठी लेकर हाँकना
सच्ची फकीरी का अनमोल भूषण है। (पृष्ठ सं. 55)

कठिन शब्दार्थ-आध्यात्मिक = ईश्वरीय। रंग महल = राजसी भवन। ब्रह्मज्ञानी = ब्रह्म को जानने वाला। मूक = जो बोल न सके। फकीरी = त्याग।

सन्दर्भ एवं प्रसंग-प्रस्तुत गद्यांश हमारी पाठ्यपुस्तक 'सृजन' में संकलित 'मजदूरी और प्रेम' शीर्षक निबंध से लिया गया है। इसके लेखक सरदार पूर्ण सिंह हैं।

लेखक का कहना है कि शारीरिक श्रम ईश्वरीय नियम है। मनुष्य उसी के द्वारा जीवन में श्रेष्ठता प्राप्त कर सकता है। संसार के अनेक महान पुरुषों ने अपने जीवन में मजदूरी और फकीरी के समन्वय द्वारा ही उच्चता प्राप्त की है।

व्याख्या-लेखक का कहना है कि मजदूरी करना जीवन की यात्रा का एक ईश्वरीय नियम है। संसार में अनेक पुरुषों तथा महिलाओं ने इस नियम को मानकर उच्चता प्राप्त की है। 'जोन ऑफ आर्क' द्वारा भेड़ें चराना

तथा फकीरी का जीवन जीना इसी का उदाहरण है। महान साहित्यकार टाल्सटाय त्यागी थे और जूते सिलने का काम करते थे।

फारसी भाषा के प्रसिद्ध शायर उमर खैयाम खुशी-खुशी तंबू सिलाई का काम करते थे। खलीफा उमर अपने राजमहल में रहकर भी चटाई बुनते थे।

कबीर ब्रह्मज्ञानी थे और रैदास नीची जाति के थे किन्तु वे ईश्वर के सच्चे और महान भक्त थे। गुरु नानक और भगवान कृष्ण पशुओं को चराने का काम करते थे।

इस शारीरिक परिश्रम के कारण उनकी श्रेष्ठता में कोई कमी नहीं आई। इससे स्पष्ट है कि शारीरिक श्रम से ही सच्ची आध्यात्मिकता की शोभा होती है।

विशेष-

(i) शारीरिक परिश्रम से ही धार्मिकता तथा आध्यात्मिकता की शोभा बढ़ती है।
(ii) संसार के अनेक महापुरुष तथा महात्मा शारीरिक श्रम करने वाले रहे हैं।
(iii) भाषा सरल और प्रवाहपूर्ण है।
(iv) शैली विवरणात्मक है।